प्रस्तावना.

आ प्रकरणमालानुं पुस्तक स्वधर्माभिलाषी जैन श्रावकोना हाथमां अर्पण करवानी साथे अमो तेमनी विनंती करीए छीए के, आजसुधीमां जैनधर्मनां बहु पुस्तको छपाइ बहार पड्यां छे. पण फक्त एक पुस्तकथी तेवां अनेक पुस्तकोनो लाभ मली शके तेवां पुस्तको तो घणां थोडां बहार पडेलां दीठामां आवे छे. जीवाजीवादि पदार्थोने जाणवाना हेतुथी जीवविचार नवतत्त्व विगेरे बहु पुस्तकोनो संग्रह करवो पडे अने तेमां द्रव्यनो बहु खर्च थाय ते करतां थोडा खर्चथी तेवां बहु पुस्तकोनो लाभ मली शके तेवुं एकज पुस्तक होय तो तेथी गरीब अने तवंगर एम सहुने सरखो लाभ थइ पडे. अने तेवा कारणथीज अमे आ प्रकरणमाला नामनुं पुस्तक छपाव्युं छे. आ पुस्तकनी प्रथमावृत्ति खपी जवाथी तथा केटलाक ग्रहस्थोनी बीजी आवृति छपाववानी जलामण थवाथी आ बीजी आवृत्ति सुधारावधारा साथे छपावी छे. आ पुस्तकमां जीवविचार विगेरे अठावीस प्रकरणोनो समावेश थयो छे. तेमां उत्तरोत्तर वधारे रसीक अने बोधकारक प्रकरणोनो समावेश करवामां आव्यो छे. प्रथम जीवविचार, नवतत्त्व, दंडक अने संग्रहणीनुं ज्ञान थया पछी इंद्रियोने नियममां राखवाना हेतुथी इंद्रियपराजयशतक अने पछी वैराग्यदर्शक वैराग्यशतक दाखल कर्युं छे. तेना पछी गौतमकुलक विगेरे कुलकोनो समावेश कर्या पछी शाश्वता जीननी स्तुति अने शत्रुंजयकल्प विगेरे महात्म्यदर्शक प्रकरणनो समावेश कर्यो छे. छेवटे आत्मज्ञाननुं जाणपणुं थवाना कारणरूप समाधिशतक अने सज्जनचित्त वल्लभ दाखल कर्युं छे. छेवट त्रण प्रकरणो मूलपाठे दाखल करी आ पुस्तकने पूर्ण करवामां आव्युं छे.

अमो आशा राखीए छीए के, जैनी भाइओ जुदा जुदा आचार्योए उपकार हेतुथी बनावेला आ प्रकरणने वांचवानो तथा अभ्यास करवानो लाभ लइ ते आचार्योनो उपकार भूलो जशे नही.

आ पुस्तक छपाववी वखते जे कांइ दृष्टिदोषथी अथवा मतिदोषथी भूल थइ होय ते सज्जन पुरुषोए सुधारी लेवुं.

ली. प्रसिद्धकर्ता.

अनुक्रमणिका.

विषय.	पृष्ठ.
१ जीवविचार.	१
२ नवतत्त्व.	१३
३ दंडक.	३३
४ संग्रहणी.	४५
५ चैत्यवंदन भाष्य.	५२
६ गुरुवंदन भाष्य.	६९
७ पच्चरकाण भाष्य.	८०
८ इंद्रियपराजयशतक.	९३
९ वैराग्यशतक.	११६
१० अभव्यकुलक.	१३८
११ पुण्यकुलक.	१४०
१२ पुण्यपापकुलक.	१९२
१३ गौतमकुलक.	१४६
१४ दानकुलक.	१५०
१५ शीलकुलक.	१५४
१६ तपकुलक.	१५८
१७ भावकुलक.	१६२
१८ उपदेशरत्नकोश.	१६६
१९ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन.	१७१
२० त्रणलोकना चैत्यबिंब संख्या यंत्र.	१७७
२१ शत्रुंजय लघुकल्प.	१८०
२२ रत्नाकरपचीशी.	१८६
२३ समाधिशतक.	१९२
२४ सज्जनचित्तवल्लभ.	२१७
२५ श्रीवीरजीन स्तवन.	२२८
२६ श्रीमंधरस्वामीनुंस्तवन	२३०
२७ गुरुप्रदक्षिणा.	२३२
२८ जीवानुंशास्तीकुलक.	२३३

॥ श्री महावीरस्वामीने नमः ॥

॥ प्रकरणमाला ॥

॥ जीवविचार प्रकरण पहेलुं. ॥

ग्रंथकर्त्ता मंगळाचरणपूर्वक प्रयोजन सूचवे छे.

भुवणपईवं वीरं, नमिऊण भणामि अवुहवोहत्थं ॥
जीवसरूवं किंचिवि, जह भणियं पुव्वसूरीहिं ॥ १ ॥

शब्दार्थः—त्रणभुवनमां दीवा समान श्री वीरप्रभुने नमस्कार करीने जेम पूर्वना आचार्योए कर्युं छे तेम अज्ञानी जीवोने बोध थवाने अर्थे कांइक पण जीवनुं स्वरूप हुं कहुं छुं. ॥ १ ॥

हवे जीवना भेदो कहे छे.

जीवा मुत्ता संसा-रिणो य तस थावरा य संसारी ॥
पुढवि जल जलण वाऊ, वणस्सई थावरा नेया ॥ २ ॥

शब्दार्थः—जीवो बे प्रकारना छे. एक मुक्तिना अने बीजा संसारी, संसारी जीवो बे प्रकारना. एक त्रस अने बीजा स्थावर. पृथ्वीकाय, अप्पकाय, तेउकाय, वाउकाय अने वनस्पतिकाय ए पांच स्थावर जाणवा. ॥ २ ॥

हवे पृथ्वीकायना भेदो कहे छे.

फलिहमणिरयणविद्दुम॥हिंगुलहरियालमणसिलरसिंदा
कणगाइधाउ सेढी, वन्निअ अरणेट्टय पलेवा ॥ ३ ॥

अब्भय तूरी ऊसं, मट्टी पाहाणजाइओ णेगा ॥
सोवीरंजण लूणाइ, पुढविभेआइ इच्चाई ॥ ४ ॥

शब्दार्थः—स्फटिक, मणि, रत्न, प्रवालां, हिंगलोक, हरताल, मणसिल, पारो, सोनादि सात धातुओ; खडी, रमची, पाषाणनी साथे मलेली धोली माटी, पारेवो पाषाण, पांच वर्णनो अबरख, तेजंतुरी खारीमाटी, माटी, अनेक पाषाणनी जातियो, सुरमो अने सिंधव आदि, इत्यादि पृथ्वीकायना भेदो जाणवा. ॥ ४ ॥

हवे अप्कायना भेदो कहे छे.

भोमंतरिक्खमुदगं, उसा हिम करग हरितणू महिआ॥
हुंति घणोदहिमाई, भेया णेगा य आउस्स ॥ ५ ॥

शब्दार्थः—पृथ्वीनुं पाणी, आकाशनुं पाणी, उसनुं पाणी, हिमनुं पाणी, करानुं पाणी, लीला घास उपरनुं पाणी, धुंवरनुंपाणी अने घनोदधिनुं पाणी, इत्यादि अप्कायना अनेक भेदो होय छे. ५

हवे अग्निकाय जीवोना भेदो कहे छे.

इंगालजालमुम्मुर, उक्कासणिकणगविज्जुमाईआ ॥
अगणिजिआणं भेआ, नायव्वा निउणबुद्धीए ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—अंगारानो अग्नि, ज्वालनो अग्नि, भरसाडनो अग्नि, उल्कापातनो अग्नि, वज्रनो अग्नि, कणियानो अग्नि अने विजलीनो अग्नि, इत्यादि अग्निकाय (तेउकाय) जीवोना भेदो सूक्ष्म बुद्धियी जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे वायुकायना भेदो कहे छे.

उब्भामगउक्कलिया, मंडलिमहसुद्धगुंजवाया य ॥
घणतणुवायाईआ. भेया खलु वाउकायस्स ॥ ७ ॥

शब्दार्थः—उद्भामकवायु, उत्कलितवायु, मंडलिवायु, महावायु, शुद्धवायु, गुंजारव करतो वायु अने घनवायु तथा

तनवायु विगेरे वायुकायना नेदो निश्चे जाणवा. ॥ ७ ॥

हवे वनस्पति कायनां नाम कहे छे.

साहारणपत्तेया, वणसइजीवा डुहा सुए जणिआ ॥
जेसिमणंताणं तणु, एगा साहारणा तेऊ ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—साधारण अने प्रत्येक एवा वनस्पतिकाय जीवोना बे नेदो सूत्रमां कह्या छे. तेमां जे अनंत जीवोनुं एक शरीर होय ते साधारण जाणवा. ॥ ८ ॥

हवे साधारण वनस्पतिकायनां नाम कहे छे.

कंदा अंकुरकिसलय, पणगा सेवाल नूमिफोमा य ॥
अल्लतियगजरमो-च वत्तुला थेग पल्लंका ॥ ९ ॥

शब्दार्थः—सूरण विगेरे सर्व जातिनां कंद, अंकुरा, कुंपलो, पांचवर्णनी लीलफुल, सेवाल, बीलाडीना टोप अने त्रण जातनुं आडु, गाजर, मोथ, वत्तुलो, थेक, पल्लंकानी नाजी. ॥ ९ ॥

कोमलफलं च सव्वं, गूढसिराइ सिणाइपत्ताइं ॥
थोहरिकुंआरिगुग्गुलि-गलोयपमुहा य छिन्नरुहा १०

शब्दार्थः—वली सर्व जातिनां कोमल फल, जेनो कणसलो, नसो, सांधो प्रगट न देखातो होय ते, शण विगेरेनां पांदडां, सर्व जातनो थोर, गुगल, गलो ए विगेरे जे छेद्यां छतां फरी उगे ते. १०

इच्चाइणो अणेगे, हवंति नेया अणंतकायाणं
तेसिं परिजाणणत्थं, लक्कणमेयं सुए नणियं ॥ ११ ॥

शब्दार्थः—इत्यादि अनंतकाय जीवोनां अनेक नेदो होय छे. तेमने जाणवा माटे आ नीचे लखेलुं लक्षण सूत्रमां कह्युं छे. ११

हवे अनंतकाय वनस्पति जीवोनुं लक्षण कहे छे.

गूढसिरसंधिपव्वं, समजंगमहीरुगं च छिन्नरुहं ॥
साहारणं सरीरं, तव्विवरीयं च पत्तेयं ॥ १२ ॥

शब्दार्थः—जेनां कणसलां, सांधा के गांठ्यो न देखाती होय, भागी नाखवाथी जेना सरखा बे भाग थता होय, जे रेसा विनाना होय, तथा जे छेदीने वावीए तो पण फरीने उगे ते साधारण वनस्पतिकायनां शरीर कहेवाय अने तेनाथी विपरीत लक्षणवाली वनस्पति होय ते प्रत्येक जाणवी. ॥ १२ ॥

हवे प्रत्येक वनस्पतिकायनुं लक्षण कहे छे.

एगशरीरे एगो, जीवो जेसिं तु ते य पत्तेया ॥
फलफूलछल्लिकठ्ठा, मूलगपत्ताणि बीयाणि ॥ १३ ॥

शब्दार्थः—वली जेमनां एक शरीरने विषे एक जीव होय ते प्रत्येक जाणवा. ते प्रत्येक वनस्पतिकायना सात भेद छे. सर्व जातिनां फल, फुल, छाल, लाकडां, मूल, पांदडां अने बीज ए सर्व प्रत्येक वनस्पतिकाय जाणवां. ॥ १३ ॥

हवे पांच स्थावर सूक्ष्मनुं वर्णन करे छे.

पत्तेयतरु मुत्तं, पंचवि पुढवाइणो सयललोए ॥
सुहुमा हवंति नियमा, अंतमुहुत्ताउ अदिस्सा ॥१४॥

शब्दार्थः—प्रत्येक वनस्पतिकायने मूकीने चौद राजलोकने विषे सूक्ष्म एवा पांचे पृथ्वीकायादि निश्चे अंतर्मुहूर्त्तनां आयुष्यवाला अने अदृश्य (चर्मचक्षुथी न देखी शकाय तेवा) होय छे.

हवे बे इंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

संखकवड्डय गंडुल--जलोयचंदणगअलसलहगाई ॥
मेहरिकिमिपूअरगा, वेइंदिय माइवाहाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थः—शंख, कोडा, गंडोला, जलो, चंदनक (अरिया) अलसिया, लालीया, मेर, (लाकडाना कीडा) करमीया, पोरा चुडेल विगेरे बेइंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १५ ॥

हवे तेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

गोमीमंकणजूआ, पिपलि उद्देहिया य मक्कोमा ॥
इल्लियघयमिल्लीउ, सावय गोगीमजाईउ ॥ १६ ॥
गद्दहय चोरकीमा, गोमयकीडा य धन्नकीमा य,
कुंथुगुवालियइल्लिया, तेइंदिय इंदगोवाई ॥ १७ ॥

शब्दार्थ—कानखजूरा, मांकरू, जू, कीमीयो, उधइ, वली मंकोमा, एलो, घीमेलो, सवा, गीगोमानी जातियो, गधैया, चोरकीमा, ठाणनाकीमा, धान्यनाकीमा, कुंथुआ, गोपालिका, एलो अने इंद्रगोप ए सर्वे तेरिंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १६-१७ ॥

हवे चउरिंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

चउरिंदिया य विछू, ढिंकुणभमरा य भमरिया तिमा
मच्छियमंसा मसगा, कंसारी कविलमोलाई ॥ १८ ॥

शब्दार्थः—वली विंछी, बगाई, भमरा तेमज भमरी, तीरू, मांखो, मांस, मच्छर, कंसारी, कपिल अने खमआकमी ए चउरिंद्रिय जीवो जाणवा. ॥ १८ ॥

हवे पंचेंद्रिय जीवोना भेद कहे छे.

पंचिंदिया य चउहा, नारय तिरिया मनुस्स देवा य ॥
नेरइया सत्तविहा, नायवा पुढविभेएणं ॥ १९ ॥

शब्दार्थ—वली पंचेंद्रिय जीवो चार प्रकारना छे. तेमां १ नारकी, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य अने ४ देवता. तेमां नारको जीवो रत्नप्रभादि पृथ्वीना भेदथी सात प्रकारना जाणवा. ॥ १९ ॥

हवे पंचेंद्रिय तिर्यचना भेद कहे छे.

जलयरथलयरखयरा, तिविहा पंचेंदिया तिरिक्का य ॥
सुसुमारमच्छकच्छव-गाहा मगराइ जलचारी ॥ २० ॥

शब्दार्थ—वली तिर्यंच पंचेंद्रिय जीवो त्रण प्रकारना छे. ते

जलचर, थलचर अने खेचर तेमां सुसुमार, मांछला, काचबा, ग्राह अने मगर ए विगेरे जलचर जीवो जाणवा. ॥ २० ॥

हवे थलचर जीवोना भेदो कहे छे.

चउपय उरपरिसप्पा, भुयपरिसप्पा य थलयरा तिविहा ॥
गोसप्पनउलपमुहा, बोधव्वा ते समासेणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थ—थलचर जीवो त्रण प्रकारना छे. ते चतुष्पद, उरपरिसर्प अने भुजपरिसर्प. ते अनुक्रमे गाय, सर्प अने नोळीया विगेरे संक्षेपथी जाणी लेवा. ॥ २१ ॥

हवे खेचर जीवोना भेदो कहे छे.

खयरा रोमयपक्खी, चम्मयपक्खी य पायडा चेव ॥
नरलोगाउ बाहिं, समुग्गपक्खी विययपक्खी ॥ २२ ॥

शब्दार्थ—खेचर जीवो बे प्रकारना छे. १ रोमजपक्षी, २ चर्मजपक्षी. ते प्रसिद्धज छे. वळी मनुष्यलोकनी बहार संकोचेली पांखोवाळा अने विस्तारेली पांखोवाळा एम बे जातना पक्षीयो छे.

हवे जलचर थलचर अने खेचरना बबे भेदो कहे छे.

सव्वे जलथलखयरा, संमुच्छिमा गब्भया दुहा हुंति ॥
कम्माकम्मगभूमि-अंतरदीवा मणुस्सा य ॥ २३ ॥

शब्दार्थ—सर्व जलचर, थलचर अने खेचरजीवो समूर्छिम तथा गर्भज एवा बे प्रकारना छे. वळी मनुष्यो (१५)कर्मभूमिना, (३०)अकर्मभूमिना अने (५६)अंतर्द्वीपना एम त्रण प्रकारना छे. २३

हवे चार निकायना देवोना भेदो कहे छे.

दसहा भवणाहिवई, अट्ठविहा वाणमंतरा हुंति ॥
जोइसिया पंचविहा, दुविहा वेमाणिया देवा ॥ २४ ॥

[illegible] २ चार पगवाळा. ३ पेटथी चालनारा. [illegible] ६ चामडानी पांखोवाळा.

शब्दार्थ—भवनपति देवता दश प्रकारना, वाणव्यंतर देवता आठ प्रकारना, ज्योतिषी देवता पांच प्रकारना अने वैमानिक देवता बे प्रकारना होय छे. ॥ २४ ॥

हवे सिद्धना भेद कहे छे.

सिद्धा पनरसभेया, तित्थातित्थाइसिद्धभेएणं ॥
एए संखेवेणं, जीवविगप्पा समक्खाया ॥ २५ ॥

शब्दार्थ—तीर्थंकर अने अतीर्थंकरादि सिद्धना भेदे करीने सिद्धो पंदर प्रकारना छे. आ संक्षेपे करीने जीवना भेदो कह्या छे.

हवे जीव विचारनां पांच द्वार कहे छे.

एएसिं जीवाणं, सरीरमाऊ ठिइ सकायंमि ॥
पाणा जोणिपमाणं, जेसिं जं अत्थि तं भणिमो ॥२६॥

शब्दार्थ—ए जीवोनुं १शरीर, २आयुष्य, ३पोतानी कायामां स्थिति, ४प्राण, ५योनिनुं प्रमाण ए जेने जेटलुं छे ते कहीये छीये.

हवे सात गाथाथी सर्वे जीवोनां शरीरनुं प्रमाण कहे छे.

अंगुलअसंखभागो, सरीरमेगिंदियाण सव्वेसिं ॥
जोयणसहस्समहियं, नवरं पत्तेयरुक्खाणं ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—सर्व एकेंद्रिय जीवोनुं शरीर अंगुलना असंख्यातमा भाग जेटलुं छे. तेमां एटलुं विशेष जाणवानुं छे के, प्रत्येक वनस्पतिकायनुं शरीर एक हजार योजनथी कांइक अधिक होय छे

बारसजोयणतिन्नेव गाउआ जोयणं च अणुकमसो॥
बेइंदियतेइंदिय-चउरिंदिय देहमुच्चत्तं ॥ २८ ॥

शब्दार्थ—बार जोजन, त्रण गाउ अने एक जोजन एम अनुक्रमे बेंद्रिय तेंद्रिय अने चउरिंद्रियनां शरीरनुं उंचपणुं जाणवुं.

धणुसयपंचपमाणा, नेरइया सत्तमाइपुढवीए ॥
तत्तो अद्धूणा, नेया रयणप्पहाजाव ॥ २९ ॥

शब्दार्थ—सातमी तमस्तमःप्रभा पृथ्वी आदिकमां रहेनारा नारकी जीवोनां शरीर पांचसो धनुष्यनां प्रमाणवाला छे. त्यार पछी अर्द्धा अर्द्धा छेठा शरीर प्रमाणवाला जीवो रत्नप्रभा नामनी पहेली नरक सुधी जाणवा. ॥ २९ ॥

जोयणसहस्समाणा, मच्छा उरगा य गब्भया हुंति ॥
धणुअपुहुत्तं पक्खिसु, भुयचारी गाउअपुहुत्तं ॥ ३० ॥

शब्दार्थ--गर्भज मत्स्य अने सर्पादि उरपरि सर्प एक हजार जोजन शरीर प्रमाणवाला होय छे. पक्षीयोनां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने नोलीया विगेरे भुजपरि सर्पनुं शरीर प्रमाण बे गाउथी नव गाउ सुधीनुं होय छे. ॥ ३० ॥

खयरा धणुअपुहुत्तं, भुयगा उरगा य जोयणपुहुत्तं ॥
गाउयपुहुत्तमित्ता, समुच्छिमा चउपया भणिया ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ-समूर्छिम एवा खेचर (पक्षीयो) नां शरीरनुं प्रमाण बे धनुष्यथी मांडीने नव धनुष्य सुधीनुं होय छे अने सर्पादि उरपरि सर्पनां शरीरनुं प्रमाण बे जोजनथी मांडीने नव जोजन सुधीनुं होय छे. समुर्छिम हाथी विगेरे चार पगवाला जीवोनां शरीरनुं प्रमाण बे गाउथी नवगाउ सुधीनुं कहुं छे. ३१

छच्चेव गाउआइं, चउप्पया गब्भया मुणेयव्वा ॥
कोसतिगं च मणुस्सा, उक्कोससरीरमाणेणं ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ--गर्भज चार पगवाला हाथी विगेरे जीवो छ गाउनां शरीर प्रमाणवाला मनाय छे अने मनुष्यो उत्कृष्ट शरीरना प्रमाणे करीने त्रण गाउ होय छे. ॥ ३२ ॥

ईसाणंतसुराणं, रयणीउ सत्त हुंति उच्चत्तं ॥

डुग डुग डुग चउगेवि--ऌणुत्तरे इक्किकपरिहाणी॥२३॥

शब्दार्थः--जवनपति,व्यंतर,ज्योतिषी अने बीजा ईशान देवलोकनां अंत सुधीना देवोनां शरीरनी उंचाइ सात हाथनी ठे. त्यार पठी बे, बे, बे, चार, नव ग्रैवेयक अने पांच अनुत्तर ए देवलोकोमां अनुक्रमे एक एक हाथ शरीर प्रमाण उंटुं जाणवुं.॥२३॥

हवे ठ गाथावमे सर्वे जीवोनुं आयुष्य कहे ठे.

बावीसा पुढवीए, सत्तय आउस्स तिन्नि वाउस्स ॥
वाससहसा दस तरु--गणाण तेउ तिरित्ताउ ॥२४॥

शब्दार्थः--पृथ्वीकायनुं बावीस हजार वर्षनुं, अप्कायनुं सात हजार वर्षनुं, वायुकायनुं त्रण हजार वर्षनुं, प्रत्येक वनस्पतिकायनुं दश हजार वर्षनुं अने तेउकायनुं त्रण अहोरात्रनुं उत्कृष्ट आयुष्य होय ठे. ए सर्वे जीवोनुं जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनुं आयुष्य होय ठे.२४

वासाणि बारसाऊ, बेइंदियाणं तेइंदियाणं तु ॥
अउणापन्नदिणाइं, चउरिंदीणं तु उम्मासं ॥ २५ ॥

शब्दार्थः—बेंद्रिय जीवोनुं आयुष्य बार वर्षनुं, तेरिंद्रिय जीवोनुं उंगणपचास दिवसनुं अने चतुरिंद्रिय जीवोनुं ठ मासनुं होय ठे. आ सर्व उत्कृष्ट आयुष्य जाणवुं अने ए सर्वे जीवोनुं जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनुं आयुष्य जाणवुं. ॥ २५ ॥

सुरनेरइयाण ठिई, उक्कोसा सागराणि तित्तीसं ॥
चउपयतिरियमणुस्सा, तिन्नियपलियोवमा हुंति॥२६॥

शब्दार्थः-देवता अने नारकीयोनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति तेत्रीस सागरोपमनी होय ठे अने चार पगवाला तिर्यंच तथा मनुष्योनी उत्कृष्ट आयुष्यस्थिति त्रण पल्योपमनी होय ठे. ॥२६॥

जलयरउरजुयगाणं, परमाऊ होइ पुवकोमीउ ॥
पक्खीणं पुण जणिउ, असंखजागो अ पलियस्स॥२७॥

शब्दार्थः—सुसुमार विगेरे जलचर, सर्प विगेरे उरपरिसर्प अने नोलीया विगेरे भुजपरिसर्प ए सर्वेनुं उत्कृष्ट आयुष्य एक पूर्वकोमीनुं होयठे. तेमज पक्षीयोनुं उत्कृष्ट आयुष्य पल्योपमना असंख्यातमा भाग जेटलुं कह्युं ठे. ॥ ३७ ॥

सवे सुहुमा साहा--रणा य संमुच्छिमा मणुस्सा य ॥
उक्कोसजहन्नेणं, अंतमुहुत्तं चिय जियंति ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः—पृथ्वीकायादि पांचे सूक्ष्म तथा साधारण जीवो तेमज समूर्छिम मनुष्यो उत्कृष्ट अने जघन्यथी एक अंतर्मुहूर्त्त निश्चे जीवे ठे. ॥ ३८ ॥

उगाहणाउ माणं, एवं संखेवउ समक्खायं ॥
जे पुण इह विसेसा, विसेससुत्ताउ ते नेया ॥ ३९ ॥

शब्दार्थः—एवी रीते अवगाहना अने आयुष्यनुं मान संक्षेपथी कह्युं. वली एमां जे कांइ विशेष जाणवानुं होय ते बीजां सूत्रथी जाणी लेवुं. ॥ ३९ ॥

हवे वे गाथाथी त्रीजुं स्वकायस्थितिद्वार कहे ठे.

एगिंदिया य सवे, असंखउस्सप्पिणी सकायंमि ॥
उववज्जंति चयंति अ. अणंतकाया अणंताउ ॥४०॥

शब्दार्थः—वली सर्वे एकेंद्रिय जीवो पोतानी कायामां असंख्य उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल सुधी उत्पन्न थाय ठे अने चवे ठे तेमज अनंतकाय जीवो पण अनंती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी सुधी पोतानी कायामां उत्पन्न थाय ठे अने चवे ठे. ॥४०॥

संखिज्जसमा विगला, सत्तठभवा पणिंदितिरिमणुया ॥
उववज्जंति सकाये, नारयदेवा अ नो चेव ॥४१॥

शब्दार्थः—विगलेंद्रिय जीवो संख्याता वर्ष सुधी पो-

१ बेइंद्रिय, तेइंद्रिय, चउरिंद्रिय.

तानी कायामां उत्पन्न थाय. पंचेंद्रिय, तिर्यंच अने मनुष्यो सात आठ जव तेज गतिमां लागट उत्पन्न थाय अने नारकी तथा देवता तेज गतिमां लागट बे वखत पण उत्पन्न थता नथी.॥ ४१॥

दशहा जियाण पाणा, इंदि उसासाउ जोग बलरूवा॥
एगिंदिएसु चउरो, विगलेसु छ सत्त अठेव ॥ ४२॥

शब्दार्थः—जीवोनेपांच इंद्रिय, श्वासोश्वास, आयुष्य, मन, वचन अने काया ए त्रण जोग मळी दश प्राणो होय छे. तेमां एकेंद्रियने चार, तथा विगलेंद्रियने छ, सात अने आठ प्राण अनुक्रमे होय छे. ॥ ४२ ॥

असन्निसन्निपंचिं-दिएसु नवदश कमेण बोधव्वा॥
तेहिं सह विप्पओगो, जीवाणं भणए मरणं ॥४३॥

शब्दार्थः—असंज्ञी पंचेंद्रिय अने संज्ञी पंचेंद्रिय जीवोने विषे अनुक्रमे नव अने दश प्राणो होय छे. ते प्राणोनी साथे जे वियोग थवो ते जीवोनुं मरण कहेवाय छे. ॥ ४३ ॥

एवं अणोरपारे, संसारे सायरंमि भीमंमि ॥
पत्तो अणंतखुत्तो, जीवेहिं अपत्तधम्मेहिं ॥४४॥

शब्दार्थः--धर्मने नहि पामेला जीवोए ए प्रमाणे अपार अने भयंकर एवा संसार समुद्रमां अनंतीवार जन्ममरण प्राप्त कर्युं छे.

तह चउरासी लक्खा, संखा जोणीण होइ जीवाणं ॥
पुढवाईण चउण्हं, पत्तेयं सत्तसत्तेव ॥४५॥

शब्दार्थः—तेवीज रीते जीवोनी योनीनी संख्या चोरासी लाख छे. तेमां पृथ्वी आदि चार निकायना दरेक जीवोनी योनीनी संख्या सात सात लाखनी छे. ॥ ४५ ॥

दस पत्तेयतरूणं, चउदसलक्खा हवंति इयरेसु ॥
विगलिंदिएसु दोदो, चउरो पंचिंदितिरियाणं ॥४६॥

शब्दार्थः—प्रत्येक वनस्पतिकाय जीवोनी दशलाख योनी अने साधारण वनस्पतिकायनी चौदलाख योनी होय छे. वली विगलेंद्रिय जीवोनी बब्बे लाख योनी जाणवी. तेमज पंचेंद्रि-तिर्यंचनी चार लाख योनी जाणवी. ॥ ४६ ॥

चउरो चउरो नारय--सुरेसु मणुआण चउदस हवंति॥
संपिंडियाय सव्वे, चुलसीलक्खाउ जोणीणं ॥४७॥

शब्दार्थः—नारकी अने देवतानी चार चार लाख तथा मनुष्यनी चौद लाख योनी होय छे. ए सर्व एकठी करीये तो सर्वे मली योनीनी चोरासी लाखनी संख्या थाय छे. ॥ ४७ ॥

सिद्धाण नत्थि देहो, न आउ कम्मं न पाणजोणीउ ॥
साइअणंता तेसिं, ठिई जिणंदागमे भणिया ॥४८॥

शब्दार्थः—सिद्धोने देह नथी, आयुष्य नथी, कर्म नथी, प्राण नथी अने योनी पण नथी. वली तेउनी सादि अनंत-स्थिति जिनेश्वरना आगममां कही छे. ॥ ४८ ॥

काले अणाइनिहणे, जोणीगहणंमि भीसणे इत्थ ॥
भमिया भमिहंति चिरं, जीवा जिणवयणमलहंता ४९

शब्दार्थः--अनादि अनंत एवा आ कालने विषे जिन वचनने नहि पामेला जीवो चोराशी लाख योनिये करीने गहन अने भयं-कर एवा आ संसारने विषे बहुकाल भम्या छे.अने बहुकाल भमशे.॥

ता संपइ संपत्ते, मणुअत्ते दुल्लहेवि सम्मत्ते ॥
सिरिसंतिसूरिसिट्ठे, करेह भो उज्जमं धम्मे ॥५०॥

शब्दार्थः--ते कारण माटे हे भव्यजनो ! हवणां दुर्लभ एवुं मनुष्यपणुं प्राप्त थये छते अने सम्यक्त्व पण प्राप्त थये छते श्री शांतिसूरि ए कहेला धर्मने विषे उद्यम करो. ॥ ५० ॥

एसो जवीवियारो, संखेवरुईणजाणणाहेउं ॥
संखित्तो उध्धरिउ, रुद्दाउ सुयसमुद्दाउ ॥५१॥

शब्दार्थः--आ जीवविचार थोमी बुद्धिवाला जीवोने जाणवा माटे विस्तारवंत एवा श्रुतसमुद्र थकी संक्षेपे उद्धर्यो छे. ॥५१॥

॥ इति जीवविचार प्रकरण पेहेलुं समाप्त. ॥

श्री

॥ नवतत्त्व प्रकरण बीजुं ॥

(आर्यावृत्तम्)

प्रथम गाथामां नवतत्त्वनां नाम गणावे छे.

जीवाऽजीवा पुण्णं, पावासवसंवरो य निज्जरणा ॥
बंधो मुक्खो य तहा, नवतत्ता हुंति नायव्वा ॥ १ ॥

शब्दार्थः—जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर अने निर्जरा वळी बंध तेमज मोक्ष ए नवतत्त्वो जाणवा योग्य छे. ॥

हवे नवतत्त्वना भेदनी संख्या कहे छे.

चउदस चउदस बाया-लीसा बासी अ हुंति बायाला ॥
सत्तावन्नं बारस, चउ नव भेया कमेणेसिं ॥ २ ॥

शब्दार्थः—पहेला तत्त्वना चौद, बीजाना चौद, त्रीजाना बेंतालीश, चोथाना ब्यासी अने पांचमाना बेंतालीस, छठाना सत्तावन, सातमाना बार, आठमाना चार अने नवमाना नव. एवा अनुक्रमे करीने भेदो थाय छे. ॥ २ ॥

हवे जीवोनी छ जाति कहे छे.

एकविहदुविहतिविहा, चउव्विहा पंचछव्विहा जीवा ॥
चेयण तस इयरेहिं, वेय गई करण काएहिं ॥ ३ ॥

शब्दार्थः—चेतना, त्रस अने स्थावर ए भेदोए करीने वली त्रण वेद, चार गति, पांच इंद्रिय अने छ काये करीने जीवो एक प्रकारना, बे प्रकारना, त्रण प्रकारना, चार प्रकारना, पांच प्रकारना छ प्रकारना अने जाणवा. ॥ ३ ॥

हवे बीजा प्रकारथी जीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे.

एगिंदिय सुहुमियरा, सन्नियर पणिंदिया य सबितिचउ॥
अपजत्ता पजत्ता, कमेण चउदस जियठाणा ॥ ४ ॥

शब्दार्थःसूक्ष्म अने बादर एवा एकेंद्रिय, बादर बेइंद्रिय, तेरिंद्रिय अने चउरिंद्रिय, संज्ञी अने असंज्ञी पंचेंद्रिय ए सात भेद पर्याप्ता अने अपर्याप्ता. जेथी अनुक्रमे जीवना चौद भेद होय ॥

हवे जीवनुं लक्षण कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

नाणं च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥
वीरियं उवओगो अ, एअं जीवस्स लक्खणम् ॥ ५ ॥

शब्दार्थः—५ ज्ञान, ४ दर्शन, ७ चारित्र अने १२ तप तेमज १ वीर्य अने १२ उपयोग ए प्रकारे जीवनुं लक्षण छे. ॥ ५ ॥

हवे पर्याप्तिनुं स्वरूप कहे छे.

(आर्यावृत्तम्)

आहार शरीर इंदिय, पजत्ती आणपाणभासमणे ॥
चउ पंच पंच छप्पिअ, इग विगलासन्नि सन्निणं ॥६॥

शब्दार्थः—आहारपर्याप्ती, शरीरपर्याप्ती, इंद्रियपर्याप्ती, श्वासोश्वासपर्याप्ती, भाषापर्याप्ती, मनपर्याप्ती. तेमां चार पर्याप्ती एकेंद्रियनी, पांच पर्याप्ती विकलेंद्रियनी, पांच पर्याप्ती असंज्ञी अने छ पर्याप्ती संज्ञी जीवोनी होय छे. ॥ ६ ॥

हवे प्राणनुं स्वरूप कहे छे.

पणिंदिअत्तिबलूसा-साउ दश पाण चउ छ सग अठ॥
इगदुतिचउरिंदीणं, असन्निसन्नीण नव दस य ॥७॥

शब्दार्थः—पांच इंद्रिय, त्रण बल, श्वासोश्वास अने आयुष्य ए दश प्राण छे. तेमां एकेंद्रियने चार प्राण छे. बेंद्रियने छ प्राण होय छे, तेरिंद्रियने सात प्राण होय छे चउरिंद्रियने आठ प्राण होय छे अने असंज्ञी तथा संज्ञीने नव तथा दश एम अनुक्रमे प्राण होय छे. ॥ ७ ॥ इति जीवतत्त्व ॥

हवे अजीवतत्त्वना चौद भेद कहे छे.

धम्माधम्मागासा, तियतियभेया तहेव अद्धा य ॥
खंधादेसपयेसा, परमाणु अजीव चउदसहा ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्तिकाय ए त्रणना खंध, देश अने प्रदेश एवा त्रण त्रण भेदो छे. एटले ते नव भेद थया तेवीज रीते वली काल, अने पुद्गलनां खंध, देश, प्रदेश तथा परमाणु. ए प्रमाणे अजीव तत्त्व चौद प्रकारे छे. ॥ ८ ॥

अजीवतत्त्वनां पांच मूलभेद अने तेनां लक्षण कहे छे.

धम्माधम्मा पुग्गल, नह कालो पंच हुंति अजीवा ॥
चलणसहावो धम्मो, थिर संठाणो अहम्मो अ ॥९॥
अवगाहो आगासं, पुग्गलजीवाण पुग्गला चउहा ॥
खंधा देसपएसा, परमाणु चेव नायव्वा ॥ १० ॥

शब्दार्थः—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल. ए पांच अजीव द्रव्य होय छे. तेमां चलन स्वभाव गुणवालो धर्मास्तिकाय छे. अने स्थिर स्वभाव गुणवालो अधर्मास्तिकाय छे. अवकाश आपवाना स्व-

जाववालो आकाशास्तिकाय जाणवो. पुद्गलो चार प्रकारना छे. ते खंध, देश, प्रदेश तथा परमाणुं निश्चयथी जाणवा. ॥ १० ॥

पुद्गलनुं लक्षण कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

सद्दंधयार उज्जोअ, पभा छाया तवेहिआ ॥
वण्ण गंध रसा फासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥ ११ ॥

शब्दार्थः—शब्द, अंधकार, रत्नादिकनो प्रकाश, चंद्र विगेरेनी कांति, छाया, तडको अथवा वर्ण, गंध, रस अने स्पर्श ए वली पुद्गलोनुं लक्षण छे. ॥ ११ ॥

हवे एक मुहूर्तनुं स्वरूप कहे छे.

एगा कोडि सतसठि--लक्खा सत्तहुत्तरी सहस्सा य ॥
दोयसया सोलहिया, आवलिया इगमुहुत्तम्मि ॥ १२ ॥

शब्दार्थः--एककोड, सडसठलाख, सत्योतेरहजार अने बसो उपर सोल अधिक एटली आवलीयो एक मुहूर्त्तने विषे थाय छे. ॥

तेज वातने बीजी रीते कहे छे.

तिन्निसहस्सा सत्त य-सयाणि तेहुत्तरं च उस्सासा ॥
एस मुहुत्तो भणीओ, सव्वेहिं अणंतनाणीहिं ॥ १३ ॥

शब्दार्थः--सर्व अनंत ज्ञानियोए त्रणहजार, सातसो अने तोंतेर एटला श्वासोश्वास थाय एटलो काल मुहूर्त्त कह्यो छे. ॥१३ ॥

हवे कालनुं स्वरूप कहे छे.

समयावली मुहुत्ता, दीहा पक्खा य मास वरिसा य ॥
भणिओ पलिया सागर, उस्सप्पिणी सप्पिणी कालो ॥

शब्दार्थः--समय, आवली, मुहूर्त्त, दिवस, पक्ष, मास, वर्ष, पल्योपम, सागरोपम, उत्सर्पिणी अवसर्पिणी ए प्रमाणे काल छे. ॥ १४ ॥ इति अजीवतत्त्व.

एक पखवाडीया सुधी होय छे. तेमां अनंतानुबंधी कषाय न-
रक गतिरूप फल आपे छे. अप्रत्याख्यानी कषाय तिर्यंच गति-
रूप फल आपे छे, प्रत्याख्यानी कषाय मनुष्य गतिरूप फल
अने संजलनो कषाय देवगतिरूप फल आपे छे. वली ते चारे
कषायो अनुक्रमे समकीतने, अणुव्रतने, सर्व विरतिने अने
यथाख्यात चारित्रने घात करनारा छे. ॥ १५ ॥

जलरेणु पुढवि पव्वय--राईसरिसो चउविहो कोहो ॥
तिणिसलयाकठ्ठठिअ--सेलत्थंभोवमो माणो ॥१६॥

शब्दार्थः—जलमां, रजमां, पृथ्वी उपर अने पर्वत उपर क-
रेली रेखा सरखो क्रोध चार प्रकारनो छे अने नेतरना, काष्ठना,
हाडकाना अने पथ्थरना स्थंभ सरखो मान छे. ॥ १६ ॥

माया वलेहिगोमुत्ति--मिंढसिंगघणवंसिमूलसमा ॥
लोहो हलिद्द खंजण--कद्दमकिमिरागसारित्थो ॥१७॥

शब्दार्थः—माया वांसनी छाल, वृषभनुं मूत्र, बोकडानुं
शिंगडुं अने नीविड एवा वांसना मूल सरखी छे. वली लोभ
हलदर, गाडानी मली, कादव अने करमजी रंग सरखो छे. १७

जस्सुदया होइ जिए, हासरइअरइसोगभयकुच्छा ॥
सनिमित्तमन्नहा वा, तं इह हासाइमोहणियं ॥१८॥

शब्दार्थः—जीवने जेना उदयथी निमित्त सहित अथवा
निमित्त विना हास्य, रति, अरति, शोक, भय अने दुगंछा
होय छे. तेने अहिं हास्यादिक मोहनीय जाणवुं. ॥ १८ ॥

पुरिसि त्थी तदुभयंपइ, अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ॥
थीनरनपुंवेउदओ, फुंफुमतणनगरदाहसमो ॥ १९ ॥

शब्दार्थः—जे कर्मना वशथी पुरुषनो, स्त्रीनो अने ते बेउनो

पण अभिलाष होय छे. ते अनुक्रमे स्त्रीवेद पुरुषवेद अने नपुंसकवेद, बकरानी लींडी, घास अने नगरना दाह सरखो जाणवो. ॥२८॥

हवे संघयणनां नाम तथा स्वरूप कहे छे.

संघयणमठिनिचर्ज, तं छद्धा वज्जरिसहनारायं ॥
तह रिसहनारायं, नारायं अद्धनारायं ॥ २९ ॥

शब्दार्थः—संघयण ते हाडकानो समूह. ते ठ प्रकारनो छे. १ वज्रऋषभनाराच तेमज २ ऋषभनाराच, ३ नाराच, ४ अर्द्धनाराच.

कीलिअ छेवठं इह, रिसहो पट्टो अ कीलिया वज्जं ॥
उभर्ज मक्कमबंधो, नारायं इम मुरालंगे ॥३०॥

शब्दार्थः—५ कीलिका, ६ सेवार्त, अहिं ऋषभ ते पाटो अने वज्र ते खीली जाणवी. अने बन्ने बाजुए मर्कटबंध ते नाराच जाणवुं. ए उदारिक शरीरवालाने होय. ॥३०॥

हवे संस्थाननां नाम तथा स्वरूप कहे छे.

समचउरंस निग्गोह, साइ वामण खुज्ज हुंम अ ॥
जीवाण ठ संठाणा, सवत्र सुलक्खणं पढमं ॥३१॥

शब्दार्थः—समचतुरस्र, न्यग्रोध, सादि, वामन, कुब्ज अने हुंडक. जीवोने ए ठ संस्थान होय छे. तेमां सर्व प्रकारे उत्तम लक्षणवालुं पहेलुं संस्थान छे. ॥ ३१ ॥

नाहिउवरि बीअं, तइअं मुह पिठिउअरउरवज्जं ॥
सिरगिवपाणीपाए, सुलक्खणं तं चउत्थं तु ॥३२॥

शब्दार्थः—नाभीना उपरनो भाग सारा लक्षणवालो होय ते बीजुं संस्थान जाणवुं. अने मुख, पीठ, पेट तथा छाती वर्जीने बाकी जे सुलक्षण अंग ते त्रीजुं संस्थान. वली माथुं, कंठ, हाथ तथा पग ए सर्व सारा लक्षणवालुं होय ते चोथुं संस्थान जाणवुं. ॥३२॥

विवरियं पंचमंगं, सवठलक्खणां अवे ठठं ॥
संठाणविहा भणिआ, जिणंदवरवीयरागेहिं ॥३३॥

शब्दार्थः—उपर कह्याथी जे विपरीत ते पांचमुं अने सर्व प्रकारे खोटां लक्षणवालुं ते छठुं होय. आ प्रमाणे सामान्य केवलीनी मध्ये उत्तम एवा वीतराग पुरुषोए संस्थानना प्रकारो कह्या छे. ॥ ३३ ॥ इति पाप तत्व.

हवे आश्रव तत्त्वना बेंतालीश भेद कहे छे.

इंदिअकसायअव्वय--जोगा पंच चउ पंच तिन्नि कमा॥
किरिआउ पणवीसं, इमा उताउ अणुक्कमसो ॥३४॥

शब्दार्थः—इंद्रिय, कषाय, अव्रत अने जोग ते अनुक्रमे पांच, चार, पांच अने त्रण छे. अने क्रियाउ पच्चीश छे. ए सर्वे मलीने आश्रवना ४२ भेद थया. वली क्रियाउ अनुक्रमे आ हवे पछी कहेवाशे ते जाणवी ॥ ३४ ॥

हवे पचीश क्रियाउ कहे छे.

काइअ अहिगरणीया, पाउसिया पारितावणी किरिया॥
पाणाइवाया रंभिय--परिग्गहिया मायवत्तीया ॥३५॥

शब्दार्थः—१ कायिकी, २ अधिकरणिकी, ३ प्राद्वेषिकी, ४ पारितापनिकी, ५ प्राणातिपातिकी, ६ आरंभिकी, ७ परिग्रहिकी अने ८ माया प्रत्ययिकी.

मिच्छादंसणवत्ती, अपच्चक्खाणाय दिठि पुठिआ ॥
पाडुच्चिअ सामंतो--वणीअ नेसत्थि साहत्थी ॥३६॥

शब्दार्थः—९ मिथ्यादर्शनप्रत्ययिकी, १० अप्रत्याख्यानिकी, ११ दृष्टिकी, १२ स्पृष्टिकी, १३ प्रातित्यकी, १४ सामंतोपनिपातिकी, १५ नैशस्त्रिकी अने १६ स्वहस्तिकी. ॥ ३६ ॥

आणवणिविआरणिआ, अणभोगा-अणवकंखपच्चइआ
अन्ना पओगसमुदा-ण पिज्जदोसेरिआवहिआ ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः-१७ आनयनिकी, १८ विदारणिका, १९ अनाभोगिकी २० अनवकांक्ष प्रत्ययिकी, ए विना बीजी ते २१ प्रायोगिकी, २२ समुदानकी, २३ प्रेमिकी, २४ द्वेषिकी अने २५ इर्यापथिकी ॥ ३७ ॥

हवे संवरतत्त्वना सत्तावन भेद कहे छे.

समिइ गुत्ति परीसह, जइधम्मो भावणा चरित्ताणि ॥
पण ति दुवीस दस बार-पंच भेएहिं सगवन्ना ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः-समिति, गुप्ति, परीसह, यतिधर्म, भावना अने चारित्र ते अनुक्रमे पांच, त्रण, बावीश, दश, बार अने पांच एवा भेदोए करीने संवरना सत्तावन भेदो छे. ॥ ३८ ॥

हवे पांच समिति अने त्रण गुप्ति कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

इरिया भासेसणादाणे-उच्चारे समिइसु अ ॥
मणगुत्ति वयगुत्ति, कायगुत्ति तहेव य ॥३९॥

शब्दार्थः-१ इर्यासमिति, २ भाषासमिति, ३ एषणासमिति, ४ आदाननिक्षेपणासमिति, ५ परिष्ठापनिकासमिति ए पांच समिति. वळी १ मनगुप्ति, २ वचनगुप्ति तेमज ३ कायगुप्ति ए त्रण गुप्ति जाणवी. ॥ ३९ ॥

हवे बावीस परिसह कहे छे.

खुहा पिवासा सी उण्हं, दंसा चेला रइत्थि चिआ ॥
चरिआ निसिहिया सिज्जा, अक्कोस वह जायणा ४०

शब्दार्थः—१ क्षुधा, २ पिपासा, ३ सीत, ४ उष्ण, ५ दंस,

हवे सतपद प्ररूपणा द्वारना पेटामा मार्गणा द्वार कहे छे.

गइ इंदीए काए, जोए वेए कसाय नाणे य ॥

संजम दंसण लेसा, नव सम्मे सन्नि आहारे ॥६१॥

शब्दार्थः--चार गति मार्गणा, पांच इंद्रिय मार्गणा, छ काय मार्गणा, त्रण जोग मार्गणा, त्रण वेद मार्गणा, चार कषाय मार्गणा, आठ ज्ञान मार्गणा, सात संयम मार्गणा, चार दर्शन मार्गणा, छ लेश्या मार्गणा, बे जव्य मार्गणा, छ सम्यक्त्व मार्गणा, बे संज्ञी मार्गणा अने बे आहार मार्गणा. ए सर्व मळी बासठ मार्गणा थाय.

हवे सिद्धिपद आपनारी मार्गणानां नाम कहे छे.

नरगइ पणिंदि तसजव, सन्नि अहक्खायखइअसम्मत्ते॥

मुक्खोणाहारकेवल-दंसणनाणे न सेसेसु ॥६२॥

शब्दार्थः—मनुष्य गति, पंचेंद्री जाति, त्रस, जव्यत्व, संज्ञी, यथाख्यात चारित्र, क्षायिक सम्यक्त्व, अणाहारी, केवलदर्शन अने केवलज्ञान. एटली मार्गणावाला जीवो मोक्ष पामे छे. बीजी मार्गणाउने विषे मोक्ष नथी. ॥ ६२ ॥

हवे द्रव्यप्रमाणादि बे द्वार कहे छे.

दव्वपमाणे सिद्धाणं-जीवदव्वाणि हुंति णंताणि ॥

लोगस्स असंखिज्जे, जागे इक्को य सव्वेवि ॥६३॥

शब्दार्थः—द्रव्य प्रमाण द्वार विचारे छते सिद्धना जीवद्रव्य अनंता छे. वळी लोकाकाशना असंख्यातमे जागे एक सिद्ध छे. अथवा सर्व सिद्ध पण होय छे. ॥ ६३ ॥

हवे स्पर्शनादि त्रण द्वार कहे छे.

फुसणा अहिया कालो, इग सिद्ध पडुच्च साइउणंतो॥

पडिवाया जावाउ, सिद्धाणं अंतरं नत्थि ॥६४॥

शब्दार्थः--सिद्धना जीवोनी स्पर्शना अधिक छे. एक सिद्धने

शब्दार्थः—गृहस्थलिंग सिद्ध भरत, अन्यलिंग सिद्ध व-ल्कल चीरी, स्वलिंग सिद्ध साधु अने स्त्री सिद्ध चंदनबाला विगेरे जाणवा.

पुंसिद्धा गोयमाई, गांगेयपमुह नपुंसया सिद्धा ॥
पत्तेय सयंबुद्धा, भणिया करकंडुकविलाई ॥६९॥

शब्दार्थः-पुरुष सिद्ध ते गौतम विगेरे, नपुंसक सिद्ध ते गांगेय विगेरे,प्रत्येकसिद्ध ते करकंडु अने स्वयंबुद्धसिद्ध ते कपील जाणवा.

तह बुद्धबोहि गुरुबो-हिया इगसमय इगसिद्धा य ॥
इगसमयेवि अणेगा, सिद्धा ते णेगसिद्धा य ॥७०॥

शब्दार्थः—तेमज बुद्धबोधित सिद्ध ते गुरुथी बोध पामेला, एक समयमां एक सिद्ध थनारा एक सिद्ध, अने एक समयमां अनेक सिद्ध थाय ते अनेकसिद्ध कहेवाय. ॥ ७० ॥

हवे नवमुं अल्पबहुत्वद्वार कहे छे.

थोवा नपुंससिद्धा, थीनरसिद्धा कमेण संखगुणा ॥
इअ मुखतत्तमेयं, नवतत्ता लेसओ भणिया ॥७१॥

शब्दार्थः-नपुंसक सिद्धो थोडा छे. स्त्री पुरुष सिद्धो अ-नुक्रमे संख्यात गुणा छे. ए प्रमाणे मोक्षतत्व कह्युं. आ नव तत्वो लेश मात्र कह्यां छे. ॥ ७१ ॥

हवे नव तत्वने जाणवानुं फल कहे छे.

जीवाइ नवपयत्थे, जो जाणइ तस्स होइ सम्मत्तं ॥
भावेण सद्दहंतो, अयाणमाणेवि सम्मत्तं ॥७२॥

शब्दार्थः—जे प्राणी जीवादि नव पदार्थने जाणे छे, तेने सम्यक्त्व होय छे. वळी भावे करीने सद्दहणा राखनारो जी-वादि नव तत्वना अजाणने पण सम्यक्त्व होय छे. ॥ ७२ ॥

हवे सम्यक्त्वनुं स्वरूप कहे छे.

सव्वाइं जिणेसर भा-सिआइं वयणाइं नन्नहा हुंति ।
इइ बुद्धि जस्स मणे, सम्मत्तं निच्चलं तस्स ॥ ७३ ॥

शब्दार्थः—" सर्व जिनेश्वरे कहेलां वचनो खोटा होय. " एवी बुद्धि जे माणसनां मनमां होय छे. तेने सम्यक्त्व निश्चल छे, एम जाणवुं. ॥ ७३ ॥

हवे सम्यक्त्व पाम्यानुं फल कहे छे.

अंतोमुहुत्तमित्तं-पि फासिअं हुज्ज जेहिं सम्मत्तं ॥
तेसिं अवड्ढपुग्गल, परिअट्टो चेव संसारो ॥७४॥

शब्दार्थः—जेणे एक अंतर्मुहूर्त्त मात्र पण सम्यक्त्व फरस्युं छे, तेमने संसार अर्द्धपुद्गल परावर्त निश्चे थाय छे. ॥७४॥

हवे आठ प्रकारे पुद्गल परावर्त कहे छे.

दव्वे खित्ते काले, भावे चउह दुह बायरो सुहुमो ॥
होइ अणंतुस्सप्पिणि, परिमाणो पुग्गलपरट्टो ॥७५॥

शब्दार्थः—द्रव्य, क्षेत्र, काल अने भाव ए चार भेद, ते चार भेदना सूक्ष्म अने बादर एवा बे भेदथी अनंत उत्सर्पिणी परिमाण एवो जे काल ते पुद्गल परावर्त्त होय छे. ॥ ७५ ॥

उरलाइसत्तगेणं, एग जिउ मुअइ फुसिय सव्वअणु ॥
जित्तिअकालि स थूलो, दव्वे सुहुमो सगन्नयरा ॥७६॥

शब्दार्थः—एक जीव उदारादिक सातेनी वर्गणाने स्पर्श करीने सर्व प्रमाणु मूके जेटलो काल मूके, ते थूल द्रव्य पुद्गल परावर्त काल थाय. उदयथी सूक्ष्म सात मांनी कोइ वर्गणा जाणवी.

लोगपएसोसप्पिणि—समया अणुभागबंधठाणा य ॥
जह तह कमनरणेणं, पुट्ठा खित्ताइ थुलियरा ॥७७॥

शब्दार्थः—लोकाकाशना प्रदेश, उत्सर्पिणीना समय अने अणुभाग बंधना सर्व स्थानक. तेम तेम अनुक्रम मरणे करीने ते क्षेत्रादि स्पर्शेला होय ते क्षेत्रादि स्थूल सूक्ष्म पल्योपम थाय.

हवे पुद्गल परावर्त्तनुं मान कहे छे.

उस्सप्पिणी अणंता, पुग्गलपरिअट्टउ मुणेअव्वो ॥
ते णंतातीअद्धा, अणागयद्धा अणंतगुणा ॥७८॥

शब्दार्थः—अनंती उत्सर्पिणी अने अवसर्पिणी जाय ए पुद्गल परावर्त काल जाणवो. अनंत एवा ते पुद्गलपरावर्त काल गया अने अनंतगुणा जाशे. ॥ ७८ ॥

हवे छ द्रव्य दश द्वारे कहे छे.

परिणामि जीव मुत्तं, सपएसा एक खित्त किरिआय॥
णिच्चं कारण कत्ता, सव्वगय इयर अपवेसे ॥७९॥

शब्दार्थः-१ जीव, २ पुद्गल, ३ धर्म, ४ अधर्म, ५ आकाश अने ६ काल. ए छ द्रव्यमां जीव अने पुद्गल परिणामी, जीव द्रव्य जीव, पुद्गल द्रव्य मूर्तिमंतरूपी, काल विनाना पांच द्रव्य सप्रदेशी, धर्म अधर्म तथा आकाश ए त्रण एक, आकाश क्षेत्र, जीव अने पुद्गल सक्रीय, धर्म अधर्म आकाश अने काल ए चार नित्य, जीव विना पांच कारण, जीव कर्ता, आकाश सर्वगत, अने आकाश विना बाकीना पांच द्रव्य एक बीजामां मळी शकता नथी माटे प्रवेश रही छे. ॥ ७९ ॥

॥ इति नवतत्त्व. ॥

अथ चोवीश दंडक.

मंगलाचरण पूर्वक कर्त्तव्य कहे छे.

नमिउं चउवीसजिणे, तस्सुत्तवियारलेसदेसणउ ॥

शब्दार्थः—गर्भजतिर्यंच अने वाउकायने चार शरीर, मनुष्यने पांच शरीर, बाकीना एकविश दंरुकने विषे त्रण शरीर होय. (इति शरीर द्वार) थावर चतुष्कने विषे उत्कृष्ट तथा जघन्यथी अंगुलना असंख्य जाग जेटलुं शरीर जाणवुं. ॥ ५ ॥

सव्वेसिंपि जहन्ना, साहाविय अंगुलस्ससंखंसो ॥
उक्कोस पणसयधणू, नेरइया सत्तहत्त सुरा ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—बाकीना वीश दंरुकने स्वाजाविक जघन्यथी अंगुलनो असंख्यातमो जाग शरीर होय छे, नारकी जीवो उत्कृष्टा पांचसो धनुष्य उंचा होय छे. देवता उत्कृष्ट सात हाथ होय छे. ६

गब्जतिरि सहसजोयण, वणस्सई अहियजोयणसहस्सं॥
नर तेइंदि तिगाउ, बेइंदिय जोयणे बार ॥ ७ ॥

शब्दार्थः-गर्भज तिर्यंच एक हजार जोजन, वनस्पति एक हजार जोजनथी कांइक अधिक, मनुष्य अने तेरिंद्रि त्रण गाउ अने बे इंद्रिय बार योजनना उत्कृष्ट शरीर प्रमाणवाला होय छे.

जोयणमेगं चउरिं-दि देहमुच्चत्तणं सुए जणियं ॥
वेउवियदेहं पुण, अंगुलसंखं समारंजे ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—चउरिंद्रिनुं शरीर उंचपणे एक जोजन सूत्रने विषे कह्युं छे. वली उत्तर वैक्रिय देह हमेशां आरंजे अंगुलनो असंख्यातमो जाग होय छे. ॥ ८ ॥

देवनरअहियलक्खं, तिरियाणं नवयजोयणसयाइं ॥
डुगुणं तु नारयाणं, जणियं वेउवियसरिरं तु ॥ ए ॥

शब्दार्थः—देवतानुं वैक्रिय शरीर एक लाख जोजननुं अने मनुष्यनुं लाख जोजनथी कांइक अधिक होय छे. तिर्यंचोनुं नवसो योजननुं अने नारकीनुं पोतानां शरीर प्रमाणथी बमणुं कह्युं छे. ॥ ए ॥

परपोटाना सरखा संस्थानवाला होय छे. पृथ्वीकाय जीवो मसूरनी दाल अने चंद्रना सरखा संस्थानवाला कह्या छे. (इति संस्थानद्वार)

हवे चार गाथाथी कषाय, लेश्या, इंद्रिय अने समुद्घात द्वार कहे छे.

सव्वेवि चउकसाया, लेसछग्गं गब्भतिरियमणुएसु ॥
नारयतेउवाउ-विगलावेमाणिय तिलेसा ॥१४॥

शब्दार्थः—सर्वे एवा जीवो पण चार कषायवाला होय छे. (इति कषायद्वार) गर्भज तिर्यंच अने मनुष्यमां छ लेश्या होय छे. वली नारकी, अग्निकाय, वाउकाय, विगलेंद्री अने वैमानिक देवता ए सर्वे त्रण लेश्यावाला होय छे. ॥ ४ ॥

जोइसियतेउलेसा, सेसा सव्वेवि हुंति चउलेसा ॥
इंदियदारं सुगमं, मणुआणं सत्त समुग्घाया ॥१५॥

शब्दार्थः—ज्योतसि तेजो लेश्यावाला छे. बाकीना सघला पण चार लेश्यावाला होयछे. (इति लेश्याद्वार) इंद्रियद्वार सुगम छे. (इति इंद्रियद्वार) मनुष्यने सात समुद्घात होयछे. ॥ १५ ॥

वेयणकसायमरणे, वेउव्वियतेयएय आहारे ॥
केवलियसमुग्घाए, सत्त इमे हुंति सन्नीणं ॥१६॥

शब्दार्थः—१ वेदना, २ कषाय, ३ मरण, ४ वैक्रीय. ५ तेजस, ६ आहारक, अने ७ केवली ए सात समुग्घात संज्ञी मनुष्यने होय छे. ॥ १६ ॥

एगिंदियाण केवलि-तेउआहारगविणाउ चत्तारि ॥
तेवेउव्वियवज्जा, विगला सन्नीण ते चेव ॥१७॥

शब्दार्थः—एकेंद्रियने, केवली तेजस अने आहारक वर्जिने चार समुद्घात होय छे. ते पूर्वे कहेला त्रण अने वैक्रिय

शब्दार्थः—देवता अने नारकीने विषे अगीयार, तिर्यंचने विषे तेर, मनुष्यने विषे पंदर, विकलेंद्रियने विषे चार, वाउकायने विषे पांच अने स्थावरने विषे त्रण योग होय छे. ॥२१॥ (इति योगद्वार)

हवे एक गाथायी योगनां नाम कहे छे.

सच्चेअरमीसअसच्च-मोस मणवयवेउव्विआहारे ॥
उरलंमिसा कम्मण, इय जोगा देसिया समए ॥२२॥

शब्दार्थः—सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यामृषा मनोयोग, असत्यामृषा मनोयोग. ए प्रमाणे मन अने वचनना योग जाणवा. वैक्रिय योग, आहारक योग तेमज औदारिक योग ए त्रण मिश्र सहित. अने वली कार्मण योग, ते साते कायाना योग आगमने विषे कह्या छे, ॥ २२ ॥ (इति योगद्वार)

हवे बे गाथायी उपयोग द्वार कहे छे.

तिअन्नाण नाणपण, चउदंसण बार जिअलक्खणुवओगा॥
इअ बारस उवओगा, भणिआ तिलुक्कदंसीहिं ॥२३॥

शब्दार्थः—त्रण अज्ञान, पांच ज्ञान, चार दर्शन, ए बार जीवना लक्षणरूप उपयोग छे. ए बार उपयोग त्रीलोक दर्शी एवा श्री जिनेश्वरोए कह्या छे. ॥ २३ ॥

उवओगा मणुएसु, बारस नव निरय तिरय देवेसु ॥
विगलदुगे पण छक्कं, चउरिंदिसु थावरे तिअगं ॥२४॥

शब्दार्थ—मनुष्यने विषे बार, नारकी तिर्यंच अने देवताने विषे नव, बेइंद्रिय अने तेरिंद्रिने विषे पांच, चौरिंद्रिने विषे छ अने थावरने विषे त्रण उपयोग होय छे.॥२४॥ (इति उपयोगद्वार)

हवे दोढ गाथायी उत्पत्ति अने चवनद्वार कहे छे.

संखमसंखा समए, गब्भयतिरिविगलनारय सुरा य ॥
मणुआ नियमा संखा, वणणंता थावर असंखा॥२५॥

पुढवाइदसपएहिय, तेऊवाऊसु उववाउ ॥३७॥

शब्दार्थः—पृथ्वीकायादि दश पदमां पृथ्वीकाय अप्काय अने वनस्पतिकायना जीवो उत्पन्न थाय छे अने पृथ्वीकायादि दश पदथी निकळेला जीवो तेउकाय अने वायुकायने विषे उत्पन्न थायछे.

तेऊवाऊगमणं, पुढवीपमुहंमि होइ पयनवगे ॥
पुढवाइठाणदसगा, विगलाइं तियं तिहिं जंति॥३८॥

शब्दार्थः—तेउकाय अने वायुकायनुं जवुं पृथ्वीकायादि नव पदने विषे होयछे. पृथ्वीकायादि दशस्थानकना जीवो त्रण विकलेंद्रिय थायछे अने ते त्रण विकलेंद्रिय ते पृथ्वीकायादि दश पदमां जाय छे. ॥३८॥

गमणागमणं गब्भय, तिरियाणं सयलजीवठाणेसु ॥
सव्वत्थ जंति मणुआ, तेऊवाऊसु नो जंति ॥३९॥

शब्दार्थः—गर्भज तिर्यंचोनुं सर्वे दंडकोने विषे जवुं आववुं थायछे. मनुष्यो सर्वे दंडकोने विषे जायछे. पण तेउकाय अने वाउकायने विषथी मनुष्यो न थाय. (इति गतिद्वार)॥ ३९ ॥

हवे त्रण गाथाथी आगति द्वार कहे छे.

अंतरदीवा जुअला, तेसिं गईउ हवंति इक्कारा ॥
दशभवणा इक्कवणे, आगईउ मणुअतिरिएसु॥४०॥

शब्दार्थ—अंतरद्वीपना युगलीयानु आववुं दश भवनपति अने एक व्यंतर एम अग्यारमां होयछे, अने ए अंतरद्वीपना जुगलीयामां उत्पन्न थवुं मनुष्य अने तिर्यंचथी होयछे. ॥४०॥

असन्नितिरिए गईउ, बावीसा जोइसविमाणविणा ॥
आगइउ थावरपंच, विगलपंचिंदितिरियनरा ॥४१॥

शब्दार्थः—देवकुरू उत्तरकुरूमां ठ नदीयोनो सर्व परिवार चोरासी हजारनो ठे अने सोल विजयमां बत्रीस नदीयो ठे, तेमां दरेकने चौदहजार नदीयोनो परिवार ठे. ॥ २३ ॥

चउदससहस्स गुणिया, अमतीस नइउ विजयमचिल्ला॥
सीउंयाए निवमंत, तहय सीयाइएमेव ॥२४॥

शब्दार्थः—ए बत्रीश नदीयोने चौदहजारे गुणतां चारलाख अमतालीश हजार थाय ठे. तेमज विजयमांहेली आमत्रीस नदीयोने पण चौदहजार गुणतां सर्व मली पांचलाख बत्रीस हजार थाय. एटली नदीयो सीतोदामां तेमज सीतामां मले ठे.

सीया सीउयावि य, वत्तीस सहस्स पंचलखेहिं ॥
सवे चउदस लखा, उप्पन्न सहस्स मेलविया ॥२५॥

शब्दार्थः—सीता सीतोदा ए बे नदीयो प्रत्येक पांचलाख बत्रीस हजारना परिवार वाली ठे ते सर्वे एकठी करतां चौदलाख ठप्पन्नहजार थाय. (१४५६०००) ॥२५ ॥

ठ जोयण सकोसे, गंगासिंधूण विहरो मूले ॥
दसगुणिउ पवंते, इय डुडुगुणणेण सेसाणं ॥२६॥

शब्दार्थः—गंगा अने सिंधु नदीनो मूलमां विस्तार सवा ठ जोजन ठे. तथा ठेमे तेथी दशगुणो (६२॥ जोजन) विस्तार ठे ए प्रमाणे बीजी नदीयोनो तेथी बमणो विस्तार जाणवो. ॥ २६ ॥

जोयणसयमुच्चिठा, कणयमया सिहरिचुल्लहिमवंता ॥
रूप्पिमहाहिमवंता, डुसु उच्चा रूप्पकणयमया ॥२७॥

शब्दार्थः—सुवर्णमय शिखरी अने लघुहिमवंत ए बे पर्वतो एक सो योजन ऊंचा ठे. रूपानो रूपीपर्वत अने सुवर्णनो महा हिमवंत पर्वत ए बे बसो जोजन ऊंचा ठे.॥ २७ ॥

तिविहा पूया य तहा, अवत्थतियभावणं चेव ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—१ त्रण निसिही, २ त्रण प्रदक्षिणा अने ३ त्रण प्रणाम, ४ त्रण प्रकारी पूजा, वली तेमज ५ त्रण अवस्थानुं भाववुं.

तिदिसिनिरिक्खणविरई, पयभूमिपमज्जणं च तिक्खुत्तो ॥
वन्नाइतियं मुद्दा-तियं च तिविहं च पणिहाणं ॥ ७ ॥

शब्दार्थः—६ त्रण दिशामां जोवानुं विरमण अने ७ त्रणवार पग मूकवानी भूमिनुं प्रमार्जन, ८ वर्णादिकनुं आलंबन, ९ वली त्रण मुद्रा अने १० त्रण प्रकारनुं प्रणिधान. ए दशत्रिकनां नाम जाणवा. ॥ ७ ॥

त्रण निसिही कये कये ठेकाणे कहेवी ते कहे छे.

घरजिणहरजिणपूआ-वावारच्चायओ निसिहितिगं ॥
अग्गद्दारे मज्झे, तइया चिइवंदणासमये ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—घर, जिनमंदिर अने जिनपूजाना व्यापारना त्यागथी त्रण निसिहि थाय छे. तेमां प्रथम जिनमंदीरना आगला बारणामां, गभारामां अने चैत्यवंदनने अवसरे एम त्रण निसिहि कहेवी. ॥ ८ ॥

हवे प्रणाम त्रिक कहे छे.

अंजलिबद्धो अद्धो-णओ अ पंचंगओ अ तिपणामा ॥
सव्वत्थ वा तिवारं, सिराइनमणे पणामतियं ॥ ९ ॥

शब्दार्थः—१ अंजलीबद्ध प्रणाम, २ अर्द्धावनत प्रणाम, ३ पंचांग प्रणाम ए त्रण प्रणाम जाणवा. अथवा सर्व प्रणाम करवाने विषे मस्तक नमाववुं ए पण त्रण प्रणाम जाणवा. ॥ ९ ॥

हवे पूजा त्रिक कहे छे.

अंगग्गभावभेया, पुप्फाहारथुईहिं पूयतिगं ॥
पंचुवयारा अट्ठो-वयार सव्वोवयारा वा ॥ १० ॥

शब्दार्थः—पुष्प केशरादिके करिने अंगपूजा, फलादि मू-कवाथी अग्रपूजा अने स्तुतिथी भावपूजा एम त्रण जातनी पूजा थायछे. अथवा पंचोपचार पूजा, अष्टोपचार पूजा अने सर्वोप-चार पूजा ए पूजात्रिक थायछे. ॥ १० ॥

हवे अवस्था त्रिक कहेछे.

भाविज्ज अवछतियं, पिंमछपयछरूवरहियत्तं ॥
छउमछकेवलित्तं, सिध्दत्तं चेव तस्सछो ॥ ११ ॥

शब्दार्थः-हे भव्यजीव! तुं भगवंतनी पिंमस्थादि त्रण अव-स्था भाव्य तेमां पिंमस्थावस्थाने छद्मस्थावस्थाये, पदस्थावस्थाने केवलज्ञानावस्थाये अने रूपरहितावस्थाने सिद्धावस्थाये भाववी, एज निश्चे ते पिंमस्थावस्थानो अर्थ छे. ॥ ११ ॥

ए त्रण अवस्था क्यां भाववी तेनां नाम कहेछे.

एह्वणचगेहिं छउम--त्ववछ पमिहारगेहिं केवलियं ॥
पलियं कुस्सग्गेहि य, जिणस्स भाविज्ज सिध्दत्तं ॥१२॥

शब्दार्थः—जिनराजनी न्हवण, पखाल अने पूजाये करीने छद्मस्थावस्था भाववी; आठ प्रातिहार्ये करीने केवली अवस्था भाववी अने पर्योंठीवालीने काउस्सगने आकारे करी सिद्धा-वस्था भाववी. ॥ १२ ॥

हवे ठ दिशामां जोवाथी निवर्तवानुं त्रिक कहेछे.

उड्ढाहोतिरियाणं, तिदिसाणनिरस्कणं चइज्जहवा ॥
पछिमदाहिणवामण, जिणमुहन्नछदिठिजुउ ॥१३॥

शब्दार्थः-उंचे, नीचे अने आडुं अवलुं ए त्रण दिशाए जोवुं त्यजी देवुं. अथवा पोतानी पाछल, जमणीबाजु अने डावीबाजु जोवुं त्यजी दइ फक्त जिनेश्वरनां मुखने विषे दृष्टि राखवी. १३

हवे आलंबन अने मुद्रा त्रिक कहेछे.

वन्नतियं वन्नत्था--लंबणमालंबणं तु पडिमाई ॥
जोगजिणमुत्तसुत्ती--मुद्दाभेएणं मुद्दतियं ॥ १४ ॥

शब्दार्थः--वर्णालंबन, अर्थालंबन, अने प्रतिमालंबन ए त्रण वर्णत्रिक जाणवा. तेमां प्रतिमादिक शब्दथी भाव अरिहंतादिनुं तथा स्थापनादिकनुं ग्रहण करवुं. वली योगमुद्रा, जिनमुद्रा अने मुक्ताशुक्तिमुद्रा एवा मुद्राना भेदथी मुद्रात्रिक जाणवुं. ॥१४॥

प्रथम योगमुद्रानुं स्वरूप कहे छे.

अन्नुन्नंतरिअंगुलि--कोसागारेहिं दोहिं हत्थेहिं ॥
पिट्टोवरि कुप्परसं--ठिएहिं तह जोगमुद्दत्ति ॥१५॥

शब्दार्थः--परस्पर बन्ने हाथनी दस आंगुली अंतरित करेला कमलना डोडाना आकारवाला तेमज पेटनी उपर बन्ने कोणीओ मुकेली एवा बे हाथ करीने रहेवुं. ते जोगमुद्रा कहेवाय छे. १५.

हवे जिनमुद्रानुं लक्षण कहे छे.

चत्तारि अंगुलाइं, पुरओ ऊणाइं जत्थ पच्छिमओ ॥
पायाणं उस्सग्गो, एसा पुण होइ जिणमुद्दा ॥१६॥

शब्दार्थः--वली जेमां पगना आगला पहोंचाने परस्पर चार आंगलनो आंतरो राखीने अने पाछली पानीनी बाजुनो कांइ ओछो आंतरो राखीने जे काउस्सग्ग करवो ए जिनमुद्रा होयछे.

हवे मुक्ता शुक्ति मुद्रा कहे छे.

मुत्तासुत्तीमुद्दा, जत्थ समा दोवि गब्भिआ हत्था ॥
ते पुण निलाडदेसे, लग्गा अन्ने अलग्गत्ति ॥१७॥

शब्दार्थः--जेमां बन्ने बे हाथ सरखा गर्भित राखी अ[illegible] ते पुण [illegible] होय (अहिं कोइ आचा[illegible] कहेवाय छे.
[illegible] हाथ [illegible] मुक्ताशुक्तिमुद्रा [illegible]

हवे कइ मुद्राये कइ क्रिया करवी ते कहे छे.

पंचंगो पणिवाउ, थयपाठो होइ जोगमुद्दाए ॥
वंदण जिणमुद्दाए, पणिहाणं मुत्तिमुद्दाए ॥१८॥

शब्दार्थः--जोगमुद्राये करीने पंचांग प्रणिपात अने स्तवपाठ थायछे; जिनमुद्राये वंदन अने मुक्ताशुक्तिमुद्राये प्रणिधान थायछे.

हवे प्रणिधानत्रिकनुं स्वरूप कहे छे.

पणिहाणतिगं चेइय-मुणिवंदणपत्थणासरूवं वा ॥
मणवयकाएगत्तं, सेसतियत्थो उ पयडुत्ति ॥ १९ ॥

शब्दार्थः—चैत्यवंदन, मुनिवंदन अने प्रार्थनास्वरूप ए त्रण प्रणिधानत्रिक जाणवुं. अथवा मन, वचन अने कायानुं एकाग्र पणुं करवुं ते पण प्रणिधानत्रिक कहेवाय. बाकी बीजा अने सातमा त्रिकना अर्थ तो प्रगटज छे. ॥१९॥

हवे बीजुं पांच प्रकारनुं अभिगमद्वार कहे छे.

सचित्तदव्वमुज्झण-मचित्त मणुज्झणं मणेगत्तं ॥
एगसाडिउत्तरासं-ग अंजलि सिरसि जिणदिठे ॥२०

शब्दार्थः—१ सचित्त द्रव्यनो त्याग, २ अचित्त वस्तुने न तजवानी अनुज्ञा, ३ मननुं एकाग्रपणुं, ४ एकसाडी उत्तरासंग अने ५ जिनेश्वरनां दर्शन थये माथा उपर अंजलि जोडवी. ए पांच अभिगम जाणवा. ॥ २० ॥

इय पंचविहाभिगमो, अहवा मुच्चंति रायचिन्हाइं ॥
खग्गं छत्तोवाणह, मउडं चमरे अ पंचमए ॥२१॥

शब्दार्थः—ए पूर्वे कहेला पांच प्रकारना अभिगम देवगुरु पासे आवता साचववा. अथवा राजचिन्ह त्यजी देवां. ते राजचिन्ह आ प्रमाणे. १खड्ग, २छत्र, ३मोजडी, ४मुकुट, अने ५चामर.

हवे नमुत्थुणंना प्रत्येक संपदाना पदनी संख्या तथा आदिपद कहे छे.

दुतिचउपणपणपणदुच--उतिपदसक्कत्थयसंपयाइपया ॥
नमुआइगपुरिसोलो--गअजयधम्मप्पजिणसव्वं ॥३४॥

शब्दार्थः--नमुत्थुणंनी नवसंपदामां अनुक्रमे बे त्रण चार, पांच, पांच पांच, बे, चार अने त्रण एटला पदनी संख्या होय छे. तेमां दरेकनुं आदि पद, नमुत्थुणं, आइगराणं, पुरिसुत्तमाणं, लोगुत्तमाणं, अजयदयाणं, धम्मदयाणं, अप्पडिहयवरनाण. जिणाणं, सव्वनूणं, सव्वदरिसिणं ए जाणवां. ॥ ३४ ॥

हवे नमुत्थुणंनी नव संपदाना नाम कहे छे.

थोअव्वसंपया उह--इयरहेऊवउगतद्धेऊ ॥
सविसेसुवउगसरूव--हेऊ नियसमफल मुखे ॥३५॥

शब्दार्थः--स्तोतव्य संपदा, सामान्य हेतु संपदा, विशेष हेतु संपदा, उपयोग संपदा, तद्धेतु संपदा, सविशेषउपयोग-हेतु संपदा, स्वरूपहेतुसंपदा, निजसमफलदसंपदा अने मोक्ष-संपदा, ए नमुत्थुणंनी नव संपदानां नाम कह्यां. ॥ ३५ ॥

हवे नमुत्थुणंनां अक्षर, संपदा अने पदनी सर्व संख्या कहे छे.

दोसगनउआ वण्णा, नवसंपय पयतित्तीस सक्कथए ॥
चेइयथयठसंपय, तिचत्तपय वण्णदुसयगुणतीसा ३६

शब्दार्थः--नमुत्थुणमां सर्व मली बसोने सत्ताणुं अक्षर, नव संपदा अने तेत्रीस पद जाणवा.वली अरिहंत चेइयाणंमां सर्व मली आठ संपदा, त्रेतालीश पद अने बसोने ओगणत्रीस अक्षर जाणवा.

चैत्यस्तव (अरिहंत चेइयाणंनी) संपदाना पदनी संख्या तथा आदि पद कहे छे.

दुछसगनवतियछचउ--छप्पयचिइसंपयापया पढमा ॥
अरिहंवंदणसद्धा--अन्नसुहुमएवजाताव ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः--आठ संपदामां अनुक्रमे पहेलेथी बे छ सात,

नव, त्रण, ठ चार अने ठ एटलां पदो होय छे. तेमज तेनां अरिहंत चेइयाणं, वंदण वत्तियाए, सद्धाए, अन्नत्थ उससिए-णं, सुहुमेहिं अंगसंचालेहिं, एवमाइएहिं, जाव अरिहंताणं अने तावकायं. ए नव आदि पदो जाणवां. ॥ ३७ ॥

हवे चैत्यस्तवनी संपदानां नाम कहे छे.

अप्पुवगमो निमित्तं, हेउइगबहुवयंत आगारा ॥
आगंतुगआगारा, उस्सग्गावहिसरूवठ ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः--अभ्युपगम संपदा, निमित्त संपदा, हेतु संपदा, एक वचनांत आगार संपदा, बहु वचनांत आगार संपदा, आ-गंतुक आगार संपदा, कायोत्सर्गावधि संपदा अने रूप संपदा ए, अरिहंत चेइयाणंनी आठ संपदाउ जाणवी. ॥ ३८ ॥

हवे नामस्तवादिकनां पद विगेरेनी संख्या कहे छे.

नामथयाइसु संपय-पयसम अडवीस सोलवीस कमा ॥
अदुरुत्तवण्ण दोसठ--दुसय सोलठ नउअसयं ॥३९॥

शब्दार्थः—नामस्तवादिकने विषे पद समान अठावीस, सोल अने वीस अनुक्रमे संपदा जाणवी. तेमज बीजीवार नहि उच्चरेला अक्षरो बसो सात, बसो सोल अने एकसो अठाणुं अ-नुक्रमे जाणवा. ॥ ३९ ॥

पणिदाण [illegible]सयं, कमेण सगति चउवीस तित्तीसा ॥
गुणतीस अठवीसा, चउतीसिगतीस बार गुरुवन्ना ॥४०॥

शब्दार्थः--प्रणिधान सूत्रमां एकसो बावन अक्षरो जाणवा. [illegible] नवकारमां सात. खमासमणमां त्रण, इरियावहिमां चोवीस, [illegible]मां [illegible], अरिहंत चेइयाणंमां [illegible]गणत्रीस, लोगस्समां [illegible]

[illegible] [illegible]ना सुधी तथा वीयराय.
[illegible]

अठावीश, पुक्खरवरमां चोत्रीस, सिद्धाणंमां एकत्रीस अने प्रणि धान त्रणमां बार गुरु अक्षर जाणवा. ॥ ४० ॥

हवे पांच दंडनुं अने तेने विषे देव वांदवाना बार अधिकारनुं ११-१२ मुं द्वार कहे छे.

पणदंडा सक्कत्थय, चेइअ नामसुअ सिद्धत्थयइत्थ ॥
दो इग दोदो पंच य, अहिगारा बारस कमेण ॥४१॥

शब्दार्थः—शक्रस्तव, चैत्यस्तव, नामस्तव, श्रुतस्तव अने सिद्धस्तव ए पांच दंडक छे. तेमां बे, एक, बे, बे अने पांच एम अनुक्रमे सर्व मळीने बार अधिकार छे. ॥ ४१ ॥

हवे ए बार अधिकारनां प्रथम पद कहे छे.

नमु जेइअ अरिहं, लोग सव्व पुक्ख तम सिद्ध जोदेवा॥
उज्जिं चत्ता वेआ, वच्चग अहिगार पढमपया ॥४२॥

शब्दार्थः--नमुत्थुणं, जे अइआ, अरिहंत चेइयाणं, लोगस्स, सव्वलोए, पुक्खरवर, तमतिमिर, सिद्धाणं बुद्धाणं, जो देवा उज्जिंत. चत्तारि अठ, वेयावच्चगराणं, ए बारअधिकारनां प्रथमपद जाणवा.

हवे कया अधिकारे कोने वांदवा ते कहे छे.

पढम अहिगारे वंदे, भावजिणे बीयएउ दव्वजिणे ॥
इगचेइय ठवणजिणे, तइय चउत्थंमि नामजिणे ४३

शब्दार्थः--प्रथम पदना अधिकारमां भावजिनने, बीजा अधिकारमां द्रव्यजिनने, त्रीजा अधिकारमां एक चैत्य स्थापना जिनने अने चोथा अधिकारमां नामजिनने वांदुं छुं. ॥ ४३ ॥

तिहुअणठवणजिणे पुण, पंचमए विहरमान जिणछठे॥
सत्तमए सुयनाणं, अठमए सव्व सिद्ध थुई ॥ ४४ ॥

शब्दार्थः-वळी पांचमा अधिकारमां त्रण भुवनना स्थापना जिनने, छठा अधिकारमां विचरता जिनने, सातमा अधिकारमां

श्रुतज्ञानने अने आठमा अधिकारमां सर्व सिद्धनी स्तुति जाणवी.

तित्थाहिव वीरथुइ, नवमे दसमे य उज्जयंतथुई ॥
अट्ठवयाइ इगदिसि, सुदिट्ठि सुरसमरणा चरिमे ॥४४॥

शब्दार्थः—नवमा अधिकारमां तीर्थपति श्री वीर प्रभुनी स्तुति अने दशमा अधिकारमां रेवताचलनी स्तुति जाणवी. तथा अगीयारमा अधिकारमां अष्टापदादिकनी अने छेला अधिकारमां सुदृष्टि देवताना स्मरणरूप स्तुति जाणवी. ॥४५॥

नव अहिगारा इह ललि-अविच्छरा वित्तिमाइ अणुसारा
तिन्नि सुयपरंपरया, बीयउ दसमो इगारसमो ॥४६॥

शब्दार्थ—ए बार अधिकारमां १-३-४-५-६-७-८-९-१२-ए नव अधिकार ललित विस्तार नामना ग्रंथनी वृत्ति आदिना अनुसारे जाणवा अने २-१०-११-ए त्रण श्रुतनी परंपराथी जाणवा.

आवस्सय चुण्णीए, जं भणियं सेसया जहिच्छाए ॥
तेणं उज्जिंताइवि, अहिगारा सुयमया चेव ॥ ४७ ॥

शब्दार्थः—जेम आवश्यक सूत्रनी चूर्णीने विषे कह्युं छे ते उज्जिंतादि शेष अधिकार कह्या प्रमाणे जाणवा. ते कारण माटे उज्जिंत सेल इत्यादिक गाथाओ पण ते सर्व अधिकार निश्चे श्रुत मत जाणवा. ॥ ४७ ॥

बीओ सुयत्थयाई, अत्थओ वन्निओ तहिं चेव ॥
सक्कत्थयंते पढिओ, दव्वारिहवसरि पयडत्थो ॥ ४८ ॥

शब्दार्थः—बीजो श्रुतस्तवादि अधिकार अर्थथी श्रुतस्तवमां वर्णवेल छे. वली शक्रस्तवना अंते जे कहेलो छे ते द्रव्य अरिहंत वांदवाना अवसरे प्रगट अर्थवाळो जाणवो. ॥ ४८ ॥

असढाइन्नणवज्जं, गीअह अवारिअंति मज्जह ॥
आयरणावि हु आण, ति वयणउ सु बहु मन्नंति ४९

शब्दार्थः—"पापरहित अने गीतार्थोए नहि वारेला एवा मध्यस्थ पंडित गीतार्थ पुरुषोए करेली आचरणा पण निश्चे भगवंतनी आज्ञा जाणवी." एवां वचनथी भला पुरुषो ते आचरणने बहु माने छे. ॥ ४९ ॥

हवे चार वांदवा योग्यनुं १३-१४-१५ मुं द्वार कहे छे.

चउ वंदणिज्ज जिणमुणि, सुयसिद्धा इह सुराइ सरणिज्जा
चउह जिणा नाम ठवण, दव्वभावजिण भेएणं ५०

शब्दार्थः—जिन, मुनि श्रुत अने सिद्ध चार वांदवा योग्य छे अने ए जिनशासनना अधिष्ठायक सम्यक् दृष्टि देवता स्मरण करवा योग्य छे. वली नाम, स्थापना, द्रव्य अने भाव एवा जिनना भेदे करीने जिनेश्वरना चार भेद छे. ॥ ५० ॥

हवे ए चार प्रकारना जिननुं स्वरूप चार निक्षेपाथी कहे छे.

नामजिणा जिणनामा, ठवणजिणा पुण जिणंदपडिमाउ
दव्वजिणा जिणजीवा, भावजिणा समवसरणत्था ५१

शब्दार्थः-जिनेश्वरनां नाम ते नामजिन, जिनेश्वरनी प्रतिमा ते स्थापनाजिन, जिन नामकर्म बांधनारा जीवो द्रव्यजीन अने समवसरणमां विराजित थयेला भावजिन जाणवा. ५१

हवे चार स्तुतिनुं १६ मुं द्वार कहे छे.

अहिगयजिण पढमथुई, बीया सव्वाणतइअ नाणस्स॥
वेयावच्च गराण उ, उवओगत्थं चउत्थथुई ॥ ५२ ॥

शब्दार्थः-ऋषभादि मुख्य धारेला जिनेश्वरनी प्रथम स्तुति, सर्व जिनेश्वरोनी बीजी स्तुति, ज्ञाननी त्रीजी स्तुति अने शासननी वेयावच्च करनारा सम्यक् दृष्टि देवोनी उपयोगने

अर्थे चोथी स्तुति जाणवी. ॥ ५२ ॥

हवे आठ निमित्तनुं १७ द्वार कहे छे.

पावखवणत्थ इरियाइ, वंदणवत्तिआइ छ निमित्ता ॥
पवयणसुरसरणत्थं, उसग्गो इअ निमित्तठ ॥ ५३ ॥

शब्दार्थः—पाप खपाववाने अर्थे इरियावहिया पडिक्कमवी ए प्रथम निमित्त, वंदणवत्तियादि छ निमित्त अने प्रवचनना देवताना स्मरणने अर्थे कायोत्सर्ग ए सर्व मलीने आठ निमित्त थया.

हवे बार हेतुनुं १८ मुं द्वार कहे छे.

चउ तस्स उत्तरीकरण—पमुह सद्धाइआ य पण हेउ ॥
वेयावच्चगरताइ, तिन्नि इअ हेउ बारसगं ॥ ५४ ॥

शब्दार्थः—ते पापनो नाश करवा माटे उतरीकरण विगेरे चार छे अने श्रद्धादिक हेतु पांच छे. वली वैयावच्चगराणं इत्यादि त्रण हेतु छे. ए सर्व मली बार हेतु चैत्यवंदनमां थाय छे. ॥५४॥

हवे सोल आगारनुं १९ मुं द्वार कहे छे.

अन्नत्थयाइ बारस, आगारा एवमाइया चउरो ॥
अगणिपणिंदि छिंदण, बोही खोभाइ डक्को य ॥५५॥

शब्दार्थः—अन्नत्थआदि बार आगार अने एवमादिक चार आगार ते चारमां १ *अग्निनो, २ पंचेंद्रिछेदन, ३ बोधि क्षोभादिक अने ४ सर्पदंश विगेरे जाणवा. ॥ ५५ ॥

हवे [illegible] १९ दोषनां नामनुं २० मुं द्वार कहे छे.

घोडगलय खंभाई, मालुद्धी निअल सबरि खलिणवहू ॥
लंबुत्तर थणसंजइ, भमुहंगुलि वायस कविठ ॥५६॥

शब्दार्थ—अश्व, लता, स्तंभ, माल, उधि निगड, शबरि,

---

* [illegible]

खलिण, वधू; लंबूत्तर, स्तन, संयति, भमुहंगुली, वायस अने कोठ दोष. ॥ ५६ ॥

सिरकंप मूअ वारुणि, पेहत्ति चइज्ज दोस उस्सग्गे ॥
लंबूत्तर थण संजइ, नदोस समणीण सवहुसड्ढीणं५७

शब्दार्थः–शिरकंप, मूक, मदीरा अने प्रेष्य ए उगणीस दोष कायोत्सर्गमां त्यजी देवा; पण लंबूत्तर, स्तन अने संयति ए त्रण दोष साध्वीने न होय. वली वधु दोष सहित उपर कहेला त्रण दोष अर्थात् चारे दोष श्राविकाने न होय, ॥ ५७ ॥

हवे काउस्सग्गना प्रमाणनुं २१ मुं तथा स्तवननुं २२ मुं द्वार कहे छे.

इरिउस्सग्गपमाणं, पणवीसुस्सास अठ सेसेसु ॥
गंभीर महुरसद्दं, महत्थजुत्तं हवइ थुत्तं ॥ ५८ ॥

शब्दार्थः–इरियावहिना काउस्सग्गनुं प्रमाण पच्चीश श्वासोश्वासनुं जाणवुं, बाकीना काउस्सग्गनुं आठ श्वासोश्वासनुं प्रमाण जाणवुं. वली मेघनी पेठे गंभीर, मधुर शब्दवाला तेम ज मद्दा अर्थवाला प्रभुनां स्तवनो होय छे. ॥ ५८ ॥

हवे एक दिवसमां चैत्यवंदन करवानुं २३ मुं द्वार कहे छे.

पडिकमणेचेइयजिमण, चरिमपडिकमणसुअणपडिबोहे
चिइवंदण इअ जइणो, सत्तउवेला अहोरत्ते ॥५९॥

शब्दार्थः–प्रभातना पडिक्कमण वखते, देहरे भोजन वखते, भोजन कर्या पछी, सांजना पडिक्कमण वखते सूति वखते, पा छली रात्रीये जाग्या पछी. एम रात्री दिवस मली साधुने सात वखते चैत्यवंदन करवुं. ॥ ५९ ॥

पडिक्कमिउ गिहिणोवि हु, सगवेला पंचवेल इअरस्स॥
पूआसु तिसंझासु अ, होइ तिवेला जहन्नेणं ॥६०॥

शब्दार्थः-पासत्थो, उसन्नो, कुसीलीयो, संसक्तो अने यथा
छंदो ए पांचेना अनुक्रमे बे, बे, त्रण, बे अने अनेक भेदो छे. जिन
मतमां ते पांच अवंदनीय जाणवा. ॥१२॥ द्वा. ३

हवे पांच वांदवाने योग्यनुं ४ थुं द्वार कहे छे.

आयरिय उवज्झाए, पवत्तिथेरे तहेव रायणिए ॥
किइकम्मनिज्जरठा, कायव्व मिमेसि पंचन्हं ॥ १३ ॥

शब्दार्थः—आचार्य, उपाध्याय, प्रवर्त्तक, स्थविर अने तेमज
रत्नाधिप. निर्ज्जराने अर्थे ए पांचेने कृतिकर्म वंदन करवुं.

हवे चार पासे वंदणा न करावबी अने चार पासे करावबी तेनुं
५-६ द्वार कहे छे.

माय पिअ जिठभाया, ओमावि तहेव सव रायणिए॥
किइकम्म न कारिज्जा, चउसमणाई कुणंति पुणो १४

शब्दार्थः—माता, पिता, म्होटो भाइ तेमज वयथी न्हाना
पण ज्ञानादिकथी मोटा. ए चार पासे वांदणां देवराववानुं न क
रवुं बाकी चार श्रमण वांदणा आपे. ॥ १४ ॥ द्वा. ५-६

हवे पांच स्थाने वांदणा न देवानुं ७ मुं द्वार कहे छे.

विक्खित्त पराहुत्ते, पमत्ते मा कयाइ वंदिज्जा ॥
आहारं नीहारं, कुणमाणे काउ कामे अ ॥१५॥

शब्दार्थः—गुरु व्यग्र चित्तवाला, बीजी बाजु मुख करी बेठे
ला, क्रोधवाला अथवा सूतेला, तेमज आहार अने नीहार करता
होय अथवा करवानी इच्छा करता होय तो न वांदवा. ॥ १५ ॥

हवे [illegible] स्थानके वांदणा देवानुं ८ मुं द्वार कहे छे.

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

पसंते आसणत्थे अ, उवसंते उवठ्ठिए ॥

अणुन्नवि तु मेहावी, किइकम्मं पउजाइ॥१६॥

शब्दार्थः—शांत चित्तवाला, आसन उपर बेठेला, क्रोधादि रहित अने उंदेण इत्यादि कहेवा तैयार होय एवा गुरुने बुद्धिमान् पुरुषोए आज्ञा मागवा पूर्वक वंदणा करवी. ॥ १६ ॥ द्वा. ७

हवे आठ कारणे वांदणा देवानुं ए मुं द्वार कहे छे.

पडिक्कमणे सज्झाए, काउस्सग्गे वराह पाहुणए ॥

आलोयण संवरणे, उत्तमठे य वंदणयं ॥ १७ ॥

शब्दार्थः—प्रतिक्रमणमां, स्वाध्यायमां, कायोत्सर्गमां अने अपराध खमाववामां वांदणा देवा. वली नवा आवेला साधुने, आलोचनामां अने मासखमणादि तपरूप संवरमां तथा अंत संलेखना करतां एम आठ कारणे वांदणा देवा. ॥ १७ ॥

हवे पचीस आवश्यकनुं १० मुं द्वार कहे छे.

दोवणयं महाजाय, आवत्ता बार चउसिर ति गुत्तं ॥

दुपवेसिग निक्कमणं, पणवीसावसय किइकम्मे ॥१८॥

शब्दार्थः—बेवार अवनत, एकवार यथाजात, बारवार आवर्त, चारवार शिरनुं अवनत, त्रण गुप्ति, बेवार अवग्रहमां प्रवेश करवो अने एकवार निकलवुं. ए पचीस आवश्यक वांदणामां होय छे. ॥ १८ ॥ द्वा. ए

किइकम्मंपि कुणंतो, न होइ किइकम्मनिज्जरा भागी॥

पणवीसामन्नयरं, साहुठाणं विराहंतो ॥ १९ ॥

शब्दार्थः—ए पचीस आवश्यकमांना एकनी पण विराधना करतो एवो साधु, कृतिकर्म करतो छतो पण ते कृतिकर्मनी निर्जरानो भागी थतो नथी. ॥ १९ ॥ द्वा. १० ॥

हवे मुहपत्तिनी पचीस पडिलेहणानुं ११ मुं द्वार कहे छे.

दिठिपडिलेहण एगा, छ उड्ढपप्फोड तिगतिगंतरिया ॥

अक्खोड पमज्जणया, नव नव मुहपत्ति पणवीसा॥२०॥

शब्दार्थः—एक दृष्टि पडिलेहन, छ उंचा पखोडा, त्रण अखोडा, त्रण प्रमार्जना. ए छेला बे त्रणने त्रणवार अंतरित करतां एक एकना नव नव भेद थाय. सर्व मळी मुहपत्तिनी पच्चीस पडिलेहणा थइ. ॥ २० ॥ द्वा. ११

हवे शरीरनी पच्चीस पडिलेहणानुं १२ मुं द्वार कहे छे.

पायाहिणेण तिअ तिअ, वामेअर बाहुसीसमुह हियए
अंसुड्ढाहो पिट्ठे, चउ छप्पय देह पणवीसा ॥ २१ ॥

शब्दार्थः–प्रदक्षिणाये करीने डाबी अने जमणी बाहुये, मस्तके, मुखे अने हृदये. ए पांच ठेकाणे त्रण त्रणवार, बे खभानी उपर अने नीचे, तेमज बे पीठ उपर अने छ बन्ने पग उपर एम सर्व मळी शरीरनी पच्चीस पडिलेहणा थाय. ॥ २१ ॥

आवस्सएसु जह जह, कुणइ पयत्तं अहीण मइरित्तं॥
तिविहकरणो व उत्तो, तह तह से निज्जरा होइ॥२२॥

शब्दार्थः–आवश्यक पडिलेहणामां जेम जेम प्रयत्नथी ऊणो अधिक न थयो छतो मन, वचन अने कायाये उपयोग राखी करे तेम तेम ते करनारने निर्जरा थाय छे. ॥२२॥ द्वा. २२

हवे बार गाथाथी बत्रीस दोष टाळवानुं १३ मुं द्वार कहे छे.

दोस अणाढिअ थद्धिअ–पविद्ध परिपिंडिअं च टोलगइ
अंकुस कच्छभ रिंगिअ, मच्छुव्वत्तं मणपउट्ठं ॥२३॥

शब्दार्थः–१ आदर रहित वांदे, २ मद सहित वांदे, ३ आचो घणो उतावळो वांदे, ४ सर्वने भेगा वांदे, ५ कुदतो वांदे, ६ रजोहरणने व झाली [illegible] वांदे, ७ काचबानी पेठे रिंगतो वांदे, ८ माछलानी पेठे [illegible] वांदे, ९ मनमां द्वेष राखतो वांदे. ॥२३ ॥

वेइयबद्ध जयंतं, जय गारव मित्त कारणा तिन्नं ॥
पमिणीयरुठ तज्जिअ, सठ्ठहीलिअ विपलिय चिअत्तं २४

शब्दार्थः—१० बे पगमां बे हाथ राखीने वांदे, ११ कांइ लालचथी वांदे, १२ जयथी वांदे, १३ गारवथी वांदे, १४ मित्र जाणी वांदे, १५ वस्त्रादि मलवानी इच्छाना कारणथी वांदे १६ चोरनी पेठे वांदे, १७ आहारादि करतो वांदे, १८ क्रोधथी वांदे, १९ तर्जना करतो वांदे, २० कपटथी वांदे, २१ अपमान करतो वांदे, २२ विकथा करतो वांदे. ॥ २४ ॥

दिठमदिठं सिंगं, कर तंमोअण अणिद्धणालिद्धं ॥
ऊणं उत्तर चूलिअ, मूअं ढढ्ढर चूमलिअं च ॥२५॥

शब्दार्थः—२३ दिठुं अणदिठुं वांदे, २४ मस्तकने एक देशे वांदे, २५ राजवेठनी पेठे वांदे, २६ वांद्या विना छुटको नथी एम जाणी वांदे, २७ मस्तके हाथ लगामतो न लगामतो वांदे, २८ अक्षरादि उंगा कहेतो वांदे, २९ पाठलना शब्दो उतावला बोले, ३० मूंगानी पेठे वांदे, ३१ उंचास्वरे वांदे, ३२ रजोहरण जमामतो वांदे. ॥ २५ ॥

बत्तीस दोसपरिसुद्धं, किइकम्मं जो पउंजइ गुरुणं ॥
सो पावइ निव्वाणं, अचिरेण विमानवासं वा ॥२६॥

शब्दार्थः-जे माणस ए उपर कहेला बत्रीस दोष रहित गुरुने वांदणां करे ठे ते थोमा कालमां मोक्षने अथवा तो देवपदने पामे ठे. ॥ २६ ॥ द्वा. १३

हवे ठ गुण उपजवानुं १४ मुं द्वार कहे ठे.

इह ठच्च गुणा विणउ-वयारमाणाइजंग गुरुपूआ ॥
तिच्छयराण य आणा, सुअधम्माराहणा किरिया २७

शब्दार्थः--ए वांदणामां ठ गुणो उपजे ठे. तेमां १ विनयनो उपचार, २ मानादिकनो नाश, ३ गुरुपूजा, ४ तीर्थंकरनी आज्ञा, ५ श्रुतधर्मनी आराधना अने ६ मोक्ष. ए ठ गुण उपजे. २७

हवे गुरु थापनानुं १५ मुं द्वार कहे ठे.

गुरुगुणजुत्तं तु गुरुं, ठाविज्जा अहव तत्थ अक्खाइ ॥
अहवा नाणाइतियं, ठविज्ज सक्खं गुरुअभावे ॥२८॥

शब्दार्थ—म्होटा गुणे करीने युक्त एवा गुरुने स्थापन करवा. अथवा साक्षात् गुरुनो अभाव होय तो तेमने ठेकाणे आपनाचार्य स्थापन करवा. कदापि स्थापनाचार्य पण न होय तो ज्ञान, दर्शन अने चारित्रनां पुस्तकादि उपकरण स्थापवां. २८

अक्खे वराडए वा, कट्ठे पुट्ठे अचित्तकम्मे अ ॥
सब्भावमसब्भावं, गुरुठवणा इत्तरावकहा ॥ २९ ॥

शब्दार्थः—अक्ष. (स्थापनाचार्य) कोडा, कांडा, पुस्तक अथवा गुरुमूर्तिनी स्थापना करवी. स्थापना बे प्रकारनी ठे. एक सद्भाव अने बीजी असद्भाव. गुरुस्थापना पण बे भेदे ठे. तेमां एक इत्वर एटले पुस्तक आदि थोडा कालनी अने बीजी यावत्कथिका एटले मूर्ति विगेरे बहुकालनी ॥ २९ ॥

गुरुविरहंमि ठवणा गुरुवएसोवदंसणत्थं च ॥
जिणविरहंमि जिणबिंबसेवणामंतणं सहलं ॥३०॥

शब्दार्थः—गुरुनो अभाव होय त्यारे गुरुनो उपदेश देखाडवा माटे स्थापना ठे. जेम हालमां जिनेश्वरनो विरह ठतां जिनबिंबनी सेवना करी आमंत्रण करवुं ते सफल ठे. ॥ ३० ॥

हवे बे प्रकार अवग्रहनुं १६ मुं द्वार कहे ठे.

चउदिसि गुरुग्गहो इह, अहुट्ठ तेरस करे सपरपक्खे ॥
अणणुन्नायस्स सया, न कप्पए तत्थ पविसेउं ॥३१॥

शब्दार्थः--आ जिनशासनमां गुरुथी अवग्रह चारे दिशामां पुरुष पुरुषने अने पुरुष स्त्रीने साडा त्रण हाथ अने तेर हाथ जाणवो. ते अवग्रहमां प्रवेश करवाने आज्ञाविना क्यारे पण न कल्पे.

हवे अक्षर संख्यानुं १७ मुं द्वार तथा पद संख्यानुं १८ मुं द्वार कहे छे.

पण तिग बारस दुगतिग, चउरो छठ्ठाण पय इगुणतीसं॥
गुणतीससेस आव-स्सयाइ सव्वपय अडवन्ना ॥३२॥

शब्दार्थः--(प्रथम वंदनक सूत्रना अक्षर २२६ छे तेमां लघु अक्षर बसो एक अने गुरु अक्षर पचीस छे.) पांच, त्रण, बार, बे, त्रण अने चार. एम छ स्थानकमां ओगणत्रीस पद छे. बाकीना ओगणत्रीस पद आवस्सियाएथी जाणवा. सर्व मली अठावन पद थाय छे.

हवे वांदणा आपनारना छ स्थाननुं १९ मुं द्वार कहे छे.

इच्छायअणुन्नवणा, अव्वाबाहं च जत्त जवणाय ॥
अवराहखामणावि य, वंदणदायस्स छठ्ठाणा ॥३३॥

शब्दार्थः--इच्छामि आदिमां पांच, अणुजाणहादिमां त्रण, अव्याबाध पूछवा माटे निसीहियादिमां बार, जत्ताभे एमां बे, जवणिजंचभे एमां त्रण, अपराध खमाववा माटे खामेमि एमां चार. ए वांदणा करनारना छ स्थानक जाणवा. ३३ ॥

हवे छ गुरु वचननुं २० मुं द्वार कहे छे.

छंदेणणुजाणामि, तहत्ति तुब्भंपि वट्टए एवं ॥
अहमवि खामेमि तुमं, वयणाई वंदणरिहस्स ॥३४॥

शब्दार्थः--छंदेण, अणुजाणामि, तहत्ति तुब्भंपिवट्टए, एवं, अहमवि खामेमि तुमं. ए छ वचन वांदणा देवा योग्य गुरुनां जाणवां.

हवे तेत्रीस आशातनानुं २१ मुं द्वार कहे छे.

---

१ साधु साधुने साडा त्रण हाथ, साधु श्रावकने साडा त्रण हाथ, साध्वीने तेर हाथ, साधु श्राविकाने पण तेर हाथ.

पुरओ पक्खासन्ने, गंता चिट्ठण निसिअणाय मणे ॥
आलोयण पडिसुणणे, पुव्वालवणे अ आलोए॥३५॥

शब्दार्थः—१ गुरुनी आगल चाले, २ पडखे चाले, ३ पछवाडे अडकतो चाले, वली एवी त्रण आशातना गुरुनी, तेटली भूमि भागे ऊभा रहेवाथी थाय अने वेसवाथी पण थाय एम ए आशातना जाणवी, १० थंडिले प्रथम पाणी ले, ११ गमणागमण पहेलुं आलोवे, १२ वोलाव्या छता न वोले, १३ कोइने गुरुनी पहेला वोलावे, १४ गुरु छता वीजा पासे भिक्षादि आहार आलोवे. ॥ ३५ ॥

तह उवदंस निमितण, खद्धा ययणे तहा अपडिसुणणे
खद्धत्ति य तत्थगए, किं तुम तज्जाय नो सुमणे॥३६॥

शब्दार्थः—१५ आहारादि वीजाने देखाडे, १६ वीजा साधुने प्रथम वोलावीने पछी गुरुने वोलावे, १७ गुरु विना वीजाने मिष्ट नवरावे, १८ पोते मिष्ट खाय, तेमज १९ गुरु वोलावे छतां न सांभले, २० गुरुने कठण वचन वोले, २१ पोताने संथारे वेठो उत्तर आपे, २२ शुं कहो छो ? एम कहे, २३ तमे करो, एम कहे, २४ तिरस्कार करे, २५ गुरुनो धर्मोपदेश सांभली हर्षित मनवालो न थाय. ॥ ३६ ॥

नो सरसि कहं छित्ता, परिसंभित्ता अणुट्ठियाइ कहे॥
संथार पाय घट्टण, चिट्ठुच्च समासणे आवि ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः—२६ तमने नथी सांभरतुं? एम कहे, २७ कथानो छेद करे, २८ सभानो भंग करे, २९ गुरुए कहेली वात फरी पोते कहे, ३० गुरुना संथारे पग लगाडे, ३१ गुरुनी शय्या संथारा के आसन उपर वेसे, ३२ गुरुथी ऊंचा आसने वेसे, ३३ [illegible] समान आसने वेसे. ॥ ३७ ॥

हवे बे विधिनुं २१ मुं द्वार कहे छे.

इरिया कुसुमिणुस्सग्गो, चिइवंदण पुत्ति वंदणा लोयं॥
वंदण खामण वंदण, संवर चउ छोभ दु सज्झाउ॥३८॥

शब्दार्थः-१ इरियावहि, २ कुसुमिण दुसुमिणनो काउस्सग्ग, ३ चैत्यवंदन, ४ मुहपत्ति पडिलेहण, ५ बे वांदणा, ६ राइय आलोवे, ७ बे वांदणा, ८ खमासमण, ९ वांदणा, १० पच्चक्खाण, ११ चार खमासमण अने बे सज्झाय. एम अनुक्रमे करे ते प्रभात वंदन विधि जाणवो. ॥ ३८ ॥

इरिया चिइ वंदणपु--त्ति वंदणं चरिमवंदणालोयं ॥
वंदणखामणचउछो--भ दिवसुस्सग्गो दुसज्झाउ॥३९॥

शब्दार्थः--१ इरियावहि, २ चैत्यवंदन, ३ मुहपत्ति पडिलेहण. ४ बे वांदणा, ५ दिवस चरिम पच्चक्खाण, ६ बे वांदणा, ७ देवसि आलोवे, ८ बे वांदणा, ९ देवसि खमावे, १० चार खमासण दइ भगवानादि चारने वांदे, ११ देवसिय प्रायश्चित माटे बे लोगस्सनो काउसग्ग अने १२ बे सज्झाय. ए संध्यावंदन विधि. ३९

एयं किइकम्मविहिं, जुंजंता चरण करण माउत्ता ॥
साहू खवंति कम्मं, अणेगभवसंचियमणंतं ॥४०॥

शब्दार्थः--ए प्रमाणे वांदणानी विधिने करता तेमज चरण सित्तरी अने करण सित्तरी सहित एवा साधुओ अनेक भवमां भेलवेलां अनंतां कर्मने खपावे छे. ॥ ४० ॥

अप्पमइभवबोहत्थं, भासियं विवरियं च जमिह मए॥
तं सोहंतु गीयत्था, अणभिनिवेसि अमच्छरिणा ॥४१॥

शब्दार्थः—अल्पमति एवा भव्य जीवोना बोधने अर्थे

में अहिं जे कांइ विपरीतपणे कहेलुं होय तेने कदाग्रह रहित अने मत्सर रहित एवा गीतार्थ पुरुषोए सुधारीने लेवुं. ॥ ४१ ॥

॥ इति गुरुवंदन भाष्य. ॥

॥ अथ पच्चक्खाण भाष्य. ॥

पच्चक्खाणनां ९ द्वार कहे छे.

दस पच्चक्खाण चउविहि, आहार दुवीसगार अदुरुत्ता
दस विगइ तीस विगई, गयदुहभंग छ सुद्धि फलं १

शब्दार्थः—१ दश पच्चक्खाण द्वार, २ चार विधि द्वार, ३ आहार द्वार, ४ बीजीवार न कहेला बावीस आगार द्वार, ५ दश विगयद्वार, ६ त्रीस नीवीयाद्वार, ७ मूल गुण उत्तरनुं भेद द्वार, ८ छ भेद शुद्धिनुं द्वार, ९ पच्चक्खाण फल द्वार. ॥ १ ॥

हवे उत्तरगुण पच्चक्खाणना दश भेद कहे छे.

अणागय मइक्कंतं, कोडीसहियं नियंटि अणगारं ॥
सागार निरवसेसं, परिमाणकडं सके अद्धा ॥ २ ॥

शब्दार्थः—१ कारणे आगलथी तप करवुं, २ पाछलथी करवुं, ३ एकनी छेडे बीजुं करवुं, ४ धारी राखेला दिवसे करवुं, ५ आगार रहित करवुं, ६ आगार सहित करवुं. ७ चार आहारादिकनुं करवुं, ८ वस्तु विगेरेनुं परिमाण करवुं, ९ संकेते करवुं अने १० काल पच्चक्खाण करवुं. ॥ २ ॥

हवे दश काल पच्चक्खाणना भेद कहे छे.

नवकारसहिय पोरिसि, पुरिमड्ढेगासणेगठाणे अ ॥
आयंबिल अभत्तट्ठे, चरिमे अ अभिग्गहे विगइ॥३॥

शब्दार्थः—१ नवकारसीनुं. २ पोरसीनुं, ३ पुरीमड्ढनुं, ४ एकासणानुं, ५ एकलठाणानुं, ६ आंबीलनुं, ७ उपवासनुं ८ दिवस च-

रिमढुं, ए अभिग्रहनुं अने १० विगइनुं. ए दश काल पच्चक्काण छे.

हवे पच्चक्काण करवानी विधि चार भेदे कहे छे.

उग्गएसूरे नमो, पोरिसि पच्चक्क उग्गएसूरे ॥
सूरे उग्गए पुरिमं, अभत्तठं पच्चक्काइ इति ॥ ४ ॥

शब्दार्थः—नवकारसीना पच्चक्काणमां "उग्गए सूरे नमोकार सहियं" एवो पाठ, पोरसिना पच्चखाणमां "उग्गए सूरे पोरिसियं" एवो पाठ, पुरिमढ्ढना पच्चक्काणमां सूरे उग्गए पुरिमढ्ढं" एवो पाठ. उपवासना पच्चक्काणमां " अभत्तठं पच्चक्काइ " एवो पाठ जाणवो. ॥ ४ ॥

हवे बीजा चार विधि कहे छे.

भणइ गुरु सीसो पुण, पच्चक्कामिति एव वोसिरइ ॥
उवओगित्थ पमाणं, न पमाणं वंजणच्छलणा ॥ ५ ॥

शब्दार्थः--प्रथम पच्चक्काण करावनार गुरु " पच्चखाइ " एम कहे, वली पच्चक्काण करनार शिष्य "पच्चक्कामि" एम कहे, पछी गुरु " वोसिरइ " एम कहे एटले शिष्य " वोसिरामि " एम कहे, अहिं धारेलो उपयोगज प्रमाण छे; परंतु अक्षरनी स्खलना प्रमाण नथी. ॥ ५ ॥

तेम वात विशेषे कहे छे.

पढमे ठाणे तेरस, बीए तिन्नित्र तिगाइ तइअंमि ॥
पाणस्स चउत्थंमि, देसावगाइ पंचमए ॥ ६ ॥

शब्दार्थः--पहेला स्थानकमां नवकारादि तेर, बीजा स्थानकमां विगइ विगेरे त्रण, त्रीजा स्थानकमां एकासणादि त्रण, चोथा स्थानकमां पाणस्स लेवेणवादि छ अने पांचमा स्थानकमां देशावकाशादि भेद जाणवा. ॥ ६ ॥

हवे पहेला, बीजा अने त्रीजा स्थानकना जुदा जुदा भेद कहे छे.

नमु पोरिसि सढ्ढ, पुरिम वढ्ढ अंगुठमाइ अडतेर ॥
निवि विगइ अंबिलतिय, तिय दु इगासण एगठाणाइ ७

शब्दार्थः—नमुकारसी, पोरसी, साढ्ढपोरसी, पुरिमढ्ढ, अवढ्ढ अने अगुठसी विगेरे बीजा आठ. ए सर्व मली प्रथम स्थानकना तेर भेद थाय, बीजा स्थानकना निवि, विगइ अने आंबील ए त्रण भेद जाणवा. त्रीजा स्थानकना बेसणुं, एकासणुं अने एकलठाणुं ए त्रण भेद जाणवा. ॥ ७ ॥

हवे पच्चखाणने विषे पांच स्थानक करवानुं कहे छे.

पढमंमि चउछाइ, तेरस बीयंमि तइय पाणस्स ॥
देसवगासं तुरिए, चरिमे जह संभवं नेयं ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—पहेले स्थानके चोथ विगेरे, बीजे स्थानके नवकारसी विगेरे तेर, त्रीजा स्थानके पाणीना, चोथे स्थानके देसावगासि अने पांचमे दिवस चरिमादि जेम घटे तेम जाणवुं. ८

तह पच्चक्खाणे—सु न पिहु सुरुग्गयाइ वोसिरइ ॥
करणविही उ न भन्नइ, जहावसीयाइ बियछंदे ॥ ९ ॥

शब्दार्थः—तेमज मध्य पच्चक्खाणमां “सूरे उग्गे विगइउ” इत्यादि पाठ वारंवार न केहवो तेमज ‘वोसिरे’ ए पाठ पण वारंवार न केहवो, एटला माटे करवानी विधि आचार्योए कही नथी. जेम ‘आवस्सियाए’ ए पाठ बीजा वांदणामां केहेता नथी तेम.

तह तिविह पच्चक्खाणे, भन्नंति अ पाणगस्स छ आगारा ॥
दुविहाहारे अचित्त—भोइणो तहय फासुजले ॥ १० ॥

शब्दार्थः—तेमज तिविहारना पच्चक्खाणमां पाणीना छ आगार कहे छे. वली दुविहार पच्चक्खाणमां अचित्त भोजन अने फासुक पाणीना छ आगार कहे छे. ॥ १० ॥

इत्तुच्चिय खवणंबिल, निव्वियाइसु फासुयं चिय जल तु॥
सड्ढावि पियंति तहा, पच्चक्कंति य तिहाहारं ॥११॥

शब्दार्थः—एटलाज माटे उपवास, आंबिल अने निविआदिकमा श्रावकोए पण साधुनी पेठे निश्चे प्रासुक पाणी पीवुं अने तिविहारनुं पच्चक्काण करवुं. ॥ ११ ॥

चउहाहारं तु नमो, रत्तिंपि मुणिण सेसतिहचउहा
निसि पोरिसि पुरिमे--गासणाइ सड्ढाण दुति चउहा १२

शब्दार्थः—नोकारसीनुं अने रात्रीनुं पच्चक्काण मुनिने चउविहारुंज होय. तथा बाकीनां पोरसी आदि तिविहारां तथा चउविहारां होय. वली श्रावकने रात्रीनुं, पोरसीनुं, पुरिमढ्ढनुं अने एकासणादिकनुं पच्चक्काण दुविहार, तीविहार अने चउविहार होय.

हवे चार प्रकारना आहारनुं ३ जुं द्वार कहे छे.

खुहपसमखमेगागी, आहारिव एइ देइ वा सायं ॥
खुहिउवि खिवइ कुट्ठे, जं पंकुवमंतमाहारो ॥ १३ ॥

शब्दार्थः—भूखने समाववाने समर्थ एवो एकज आहार, आहारमां आवता एवा लवणादी अथवा स्वाद आपनारा हिंग विगेरे, वली जे भूख्यो छतो पण पेटमां नाखे एवो कादवना सरखो ते आहार. ॥ १३ ॥

हवे ए आहारना मूल चार भेद कहे छे.

असणे मुग्गोयणस–तु मंड पय खज्ज रब्ब कंदाइ ॥
पाणे कंजिय जव कयर, कक्कोडग सुराइजलं॥१४॥

शब्दार्थः—अशनमां मग, भात, सत्तु, मांडा, दुध, खाजुं, राब अने कंद विगेरे जाणवा. तेमज पानमां कांजी, जवनुं, केरनुं अने काकडीनुं धोवण तथा मदिरादि जल जाणवुं ॥ १४ ॥

खाइमे भत्तोस फलाइ, साइमे सुंठि जीर अजमाइ॥
महु गुरु तंबोलाइ, अणाहारे मोय निंबाई ॥ १५ ॥

शब्दार्थः—खादिममां शेकेलां धान्य तथा फलादि जाणवां अने स्वादिममां सुंठ, जीरुं, अजमो विगेरे, वली मध, गोल अने नागरवेलना पानादि जाणवुं. तेमज अनाहारने विषे मात्रुं तथा तथा लींबना प्रमुख जाणवुं. ॥ १५ ॥

हवे नवकारसी विगेरेना आगारनी संख्यानुं ४ थुं द्वार कहे छे.

दो नवकार छ पोरिसि, सग पुरिमड्ढ इगासणे अट्ठ॥
सत्तेगठाण अंबिल अट्ठ पण चउत्थि छप्पाणे ॥१६॥

शब्दार्थः—नवकारसीमां बे, पोरसीमां छ, पुरिमड्ढमां सात, एकासणामां आठ, एकलठाणामां सात, आंबीलमां आठ, चोथ भक्तमां पांच अने पाणस्सना पच्चक्खाणमां छ आगार जाणवा.

चउ चरिमे चउभिग्गहि, पण पावरणे नवट्ठ निव्वीए॥
आगारुक्खित्तविवेग, मुत्तु दवविगइनियमिट्ठ ॥ १७ ॥

शब्दार्थः—दिवस चरिममां चार, अभिग्रहमां चार, वस्त्र मूकवामां पांच, निवीमां पांच अथवा आठ आगार जाणवा. वली द्रव्य विगइनुं नियम करनारने 'उक्खित्त विवेगं' ए आगार मूकीने बाकीना आठ आगार जाणवा. ॥ १७ ॥

हवे तेज पच्चखाणना आगारनां नाम कहे छे

अण सह नमुक्कारे, अन्न सह पच्छ दिसय साहु सव्व ॥
पोरिसि छ सड्ढपोरिसि, पुरिमड्ढे सत्त समहत्तरा ॥१८॥

शब्दार्थः—नमुक्कारसीमां अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं ए बे, पोरसीमां अन्नत्थणाभोगेणं, सहसागारेणं, पच्छन्नकालेणं, दिसामोहेणं, साहुवयणेणं, अने सव्वसमाहिवत्तियागारेणं ए छ [illegible] अने पुरिमड्ढमां उपरना

छ सहित एक महत्तरागारेणं ए वधारवो. जेथी तेमां सात थाय.

हवे एकासणाना तथा एकलठाणाना आगार कहे छे.

अन्न सहसागारिय, आउंटण गुरुअ पारिमहसव ॥
एगवियासणि अठउ, सग इगठाणे आउटविणा १९.

शब्दार्थः--अन्नत्थणाभोगेणं, सहस्सागारेणं, सागारि आगारेणं आउंटण पसारेण, गुरु अब्भुठाणेणं, पारिठावणियागारेणं, महत्तरागारेणं, सव्वसमाहिवत्तियागारेणं. ए आठ आगार एकासणामां अने बियासणामां जाणवा. अने तेमांथी एक आउंटण विना सात आगार एकलठाणामां जाणवा. ॥१९॥

हवे विगय, नीवी अने आंबीलना आगार कहे छे.

अन्नसहलेवागिह, उक्खित्त पडुच पारिमहसवे ॥
विगइ निविगए नव, पडुच्च विणु अंबिले अठ ॥२०॥

शब्दार्थः--अन्नत्थ, सहस्सा, लेवालेवेणं, गीहत्थ संसठेणं, उक्खित्त विवेगेणं, पडुच्चमक्खिएणं, पारिठा, महत्तरा, सवसमाहि. ए नव विगइ तथा निविगइने विषे जाणवा अने तेमांथी एक पडुच्चमक्खिएणं विना आठ आंबीलना आगार जाणवा. ॥२०॥

हवे उपवासना आगार कहे छे.

अन्न सह पारि मह सव, पंच खवणे छ पाणिलेवाई॥
चउ चरिमं गुठाइ, भिगहि अन्न सहमह सवे ॥२१॥

शब्दार्थः--अन्नत्था, सहस्सा, पारिठावणिया, महत्तरा, सव समाहि. ए पांच आगार उपवासमां; तेमज लेवेणवा विगेरे छ आगार पाणस्सना जाणवा. वली अन्नत्था, सहस्सा महत्तरा, सवसमाहि. ए चार आगार दिवस चरिमना पच्चख्खाणमां अने अंगुठ सहियादि अभिग्रहना पच्चख्खाणमां जाणवा. ॥ २१ ॥

दुध महु मज्ज तिलं, चउरो दवविगइ चउर पिंडदवा॥

घय गुल दहियं पिसियं, मक्खण पक्कन्न दो पिंडा ॥२२॥

शब्दार्थः—दुध, मध, मद्य अने तेल ए चार द्रव (ढीली) विगइ छे. वली घी, गोल, दहिं अने मांसपेसी ए चार पिंड तथा द्रव विगइ छे. वली मांखण अने पक्वान्न ए बे तो पिंडज विगइ छे.

हवे सरखा पच्चक्काण गणावे छे.

पोरिसि सड्ढमवड्ढं, दुभत्त निविगई पोरिसाइ समा ॥
अंगुठ मुठि गंठी, सचित्त दव्वाइ भिग्गहियं ॥२३॥

शब्दार्थः—पोरसी अने साढ पोरसी, अवड्ढ अने पुरिमड्ढ, एकासणुं अने बेयासणुं तथा आगार. विगइ अने नीवि तथा आगार, तेमज अंगुठसहियं, मुठिसहियं, गंठिसहियं अने सचित्त द्रव्यादिक ए सर्व अभिग्रह पच्चक्काण मांहो मांहे सरखां छे. २३

हवे ए सर्व आगारोना अर्थ कहे छे.

विस्सरण मणाभोगो, सहस्सागारो सयं मुहपवेसो ॥
पच्छन्नकाल मेहाइ, दिसिविवज्जासु दिसिमोहो ॥२४॥

शब्दार्थः—आगारनो अर्थ विसरवाथी कांइ मुखमां नाखे ते अनाभोग, सहसात्कारे पोतानी मेळे मुखमां पेसी जाय ते सहसागार, पच्छन्नकाल ते मेघ विगेरेथी दिवसनो खबर न पडवाथी जमे ते. तेमज दिशाना विपर्यासपणाथी दिशामोह ए आगारोमां पण पच्चक्काण न भांगे. ॥२४॥

साहुवयण उग्घाडा, पोरिसि तणु सुत्थया समाहित्ति॥
संघाइकज्ज महत्तर. गिहत्थ वंदाइ सागारी ॥२५॥

शब्दार्थ—उघाडा [illegible] एवुं साधुनुं वचन सांभळीने प[illegible] [illegible] तेम. तेमज शरीरनी स्वस्थताने असमाधिने [illegible] संघादिकना कार्य निमित्त महत्तरनो आ- [illegible]

होथी पच्चक्खाण पारे, तेमज गृहस्थ वांदवा आववाथी पारे ते सर्व सागारी आगार जाणवा. ॥ २५ ॥

आउंटणमंगाणं, गुरुपाहुणसाहुगुरुअब्भुट्ठाणं ॥
परिट्ठावण विहिगहि ए, जइण पावरण कडिपट्टो॥२६॥

शब्दार्थः--हाथ पग विगेरे अंगनुं संकोचवुं तथा पसारवुं गुरु तथा प्राहुणा साधु आवे उभा थवुं, परठववा योग्य विधियी लावेला अने वधेला आहारने खावा पच्छे वली साधुने प्रावरणना पच्चक्खाणमां चोलपट्ट लेवा उठवुं पच्छे तोपण पच्चक्खाण न भांगे.

खरडिय लूहिय डोवा--इ लेव संसट्ठ डुच्चमंडाइ ॥
उक्खित पिंडविगइ--णं मक्खियं अंगुलीहिं मणा॥२७॥

शब्दार्थः--न लेवा योग्य वस्तुथी खरडायली कडछी प्रमुखने लूहीने ते वच्चे आपे तेथी, तेमज गृहस्थना हाथथी विगय-वच्चे स्पर्शित थयेलां शाक मांडादि आपे तेथी, उपर रहेला पिंड-विगयने लइने आपे तेथी, तेमज लगार पोतो आंगलीयो चो-पडेला मांडादि आपे तेथी पण पच्चक्खाण न भांगे ॥२७॥

हवे पाणीना ६ आगार कहे छे.

लेवाडं आयमाइ, इअर सोवीरमच्छ मुसिणजलं ॥
धोयण बहुल ससित्थं, उस्से इम इअर सित्थविणा॥२८.

शब्दार्थः--१ लेपकृत ते ओसामण आदिनुं पाणी, २ अले-पकृत ते धोवण विगेरेनुं पाणी, ३ निर्मल ते उनुं पाणी, ४ बहुलेप ते चोखा विगेरेना धोवणनुं पाणी, ५ सीथ सहित ते आटायो खर-डायला हाथनुं दाणा सहित पाणी अने ६ तेथी चीजुं ते तेनेज गली लीधेनुं पाणी, ए ६ आगार पाणीना जाणवा. ॥२८॥

हवे दश विगइनां स्वरूपनुं ५ मुं द्वार कहे छे.

पण चउ चउ चउ दु दुविह, छ भक्ख दुद्धाइ-विगइ इगवीसं

धाणी, जललापसी अने पोतुं दइने करेलो पुमलो. ए पांच नि-
वीयातां जाणवा. ॥ ३५ ॥

दुध्धदही चउरंगुल, दवगुम घयतिल्ल एगजत्तुवरिं ॥
पिंमगुल मरकणाणं, अद्दामलयं य संसठं ॥ ३६ ॥

शब्दार्थः—दुध अने दहि भात उपर चार आंगुल होय
तथा ढीलो गोल, घी अने तेल ए त्रण भात उपर एक आंगल
होय तेमज कठिण गोलथी मसलेला चूरमादिकमां पीलुना
म्होर सरखा गोलना ककमा होय तो ते संसृष्ट कहेवाय. ते
नीवीयातामां कल्पे छे. ॥ ३६ ॥

हवे कांइक विशेष कहे छे.

दव्वहयविगई विगइ--गयं पुणो तेण ते हयं दव्वं ॥
उध्धरिए तत्तंमिय, उक्किठ दव्वं इमं चन्ने ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः—शालना चोखा विगेरेथी निर्विर्य करेली क्षीरादि-
क विगइ तथा वर्णिकादिके करीने हणी एवी जे घृतादि विगइ
ने विकृती गत कहेवाय. वली भात विगेरेथी हणयुं एवुं जे विकृ-
तिगत ते हतद्रव्य कहेवाय. तथा तावकामांथी सुखमी काढी
लीधा पछी वधेलुं टाढुं थयेलुं जे घी तेमां नाखेला खोटने हवां!
चीने करीए ते उत्कृष्ट द्रव्य कहेवाय एम केटलाक आचार्य कहे छे.

हवे केटलांक उत्तम द्रव्य गणावे छे.

तिल्ल संकुलि वरसोलाई, रायणंबाइ दुक्खवाणाई ॥
डोलिय तिल्लाईया, सरसुत्तम दव्व लेवकमा ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः—तलसांकली, वरसोला विगेरे, रायण, केरी, द्रा-
क्षादि विगेरे, डोलीया विगेरेनां तेल. ए सर्वने सरस उत्तम
द्रव्य कहेवाय अथवा लेपकृत द्रव्य पण कहेवाय. ॥ ३८ ॥

तें सर्व कारणे कल्पे ते कहे छे.

विगइगयासंसठा, उत्तम दवाइ निव्विगइयंमि ॥
कारणजायं मुत्तुं, कप्पंति न जुत्तुं जं वुत्तं ॥ ३९ ॥

शब्दार्थः—विगइथी उत्पन्न थयेला, संसृष्ट अने उत्तम द्रव्यादिक नीवीना पच्चक्खाणमां कारणने मूकीने खावुं न कल्पे अर्थात् कारणे खवाय. कारण कह्युं छे के.॥३९॥

विगइं विगइभीउं, विगइगयं जो अ भुंजए साहू ॥
विगइ विगई सहावा, विगई विगइं बलानेइ ॥४०॥

शब्दार्थः—विगइने अने विगइमां रहेला क्षीरादिकने नरकादि विरुद्ध गतिथी जय पामतो जे साधु नक्षण करे छे, तो विकार पमाकवाना स्वनाववाळी विगइ ते साधुने माठी गति प्रत्ये पहोंचाके छे. ॥ ४० ॥

हवे चार अनक्ष्य विगइना उत्तरजेद कहे छे.

कुत्तिय मच्छिय भामर, महुतिहा कठ पिठ मज्जदुहा॥
जल थल खगमंस तिहा, घयव्व मक्खण चउ अभक्खा४१

शब्दार्थः—कुतीयुं, मांखीनुं अने जमरीनुं एम त्रण जातनुं मध, काष्टथी अने पिष्टथी बनावेली मदिरा; वळी जळचर, थळचर अने खेचर जीवोनुं एम त्रण जातनुं मांस अने घीनी पेठे चार जातनुं माखण ए सर्व अनक्ष्य छे, ॥४१॥

हवे पच्चक्खाणना ४९ जांगा कहे छे.

मणवयणकायमणवय, मणतणुवयतणुतिजोगिसत्तसत्त॥
करकारणुमइ दुतिजुय, तिकालि सीयाल जंगसयं ४२

शब्दार्थः—मन, वचन अने काया, वळी मनवचन, मनकाया अने वचनकाया; तेमज मन, वचन अने काया ए त्रण

योग, ए सात भांगाने करवा, कराववा अने अनुमोदवा. एवा भेदथी एकवीस भेद थाय. वली तेने द्वीक त्रीक योग सहित करी भूत, भविष्य अने वर्तमान काले करी गुणता एकसो सुडतालीस भांगा थाय. ॥ ४२ ॥

हवे ए पच्चक्खाणनुं स्वरूप कहे छे.

एयं च उत्तकाले, सयं च मण वयण तणुहिं पालणियं॥
जाणगजाणग पासि, त्तिभंग चउगे तिसु अणुन्ना ४३

शब्दार्थः--वली ए पच्चक्खाण कहेला काले लेनार धणीये पोते मन, वचन अने कायाए करीने पालवा. वली ते पच्चक्खाण करनार जाण अथवा अजाण तेमज करावनार जाण अथवा अजाण एम चार भांगां थाय छे. तेमां प्रथम त्रणने आज्ञा छे.

हवे पच्चक्खाणनी छ विशुद्धिनुं ७ मुं द्वार कहे छे.

फासियपालियसोहिय, तिरियकिट्टियआराहियछसुद्धं॥
पच्चक्खाणं फासिय, विहिणोचिय कालि जंपत्तं ॥४४॥

शब्दार्थः--फरस्युं, पाल्युं, सोध्युं, तर्युं, कीर्त्युं अने आराध्युं, ए छ प्रकारे शुद्ध एवुं पच्चक्खाण फल आपनारुं थाय छे. तेमां प्रथम विधि प्रमाणे योग्य काले जे पच्चक्खाण लीधुं ते फरस्युं कहेवाय. ॥ ४४ ॥

पालिय पुणपुणसरियं, सोहिय गुरुदत्त सेस भोयणओ॥
तिरिय समहिय कालो, किट्टिय भोयण समय सरणो ४५

शब्दार्थः--लीधेला पच्चक्खाणने वारंवार संभारवुं ते पाल्युं कहेवाय, गुरुने आप्या पछी बाकीनुं पोते जमवुं ते सोध्युं कहेवाय. लीधेला कालथी कांईक अधिक काल गया पछी पच्चक्खाण पूर्ण करे ते तर्युं कहेवाय अने भोजनना अवसरे लीधेला पच्चक्खाणने संभारवुं ते कीर्त्युं कहेवाय. ॥ ४५ ॥

इअ पच्चिचरिअं आरा-हियं तु अहवा ठ सुद्धि सद्दहणा॥
जाणण विणयणु जावण-अनुपालण जाव सुध्दति४६

शब्दार्थः--उपर कहेला सर्व प्रकारे आचरयुं तेने आराध्युं कहेवाय अथवा पच्चरकाणनी ठवि शुद्धि ठे ते लीधा प्रमाणे करवुं, जाणनी पासे करवुं, गुरुनो विनय करवो, गुरु बोले तेम मनमां बोलवुं, कष्ट पमे तो पण जागवुं नहि, शंकादिदोष रहित रहेवुं, ए ठ विशुद्धि जाणवी. ॥ ४६ ॥

हवे पचरकाणनुं बे प्रकारे फल थाय ठे ते कहे ठे.

पच्चरकाणस्स फलं, इह परलोए य होइ दुविहं तु ॥
इहलोए धम्मिल्लाइ, दामन्नगमाइ परलोए ॥४७॥

शब्दार्थ—पचरकाणनुं फल आ लोकमां धम्मिल्लकुमारादिनां अने परलोकमां दामन्नकादिकनां दृष्टांतथी बे प्रकारे जाणवुं. ॥ ४७ ॥

हवे समाप्ति करता कहे ठे.

पच्चरकाणमिणं से--विऊण जावेण जिणवरुद्दिठं ॥
पत्ता अणंत जीवा, सासयसुरकं अणाबाहं ॥४८॥

शब्दार्थः--श्री जिनेश्वरे उपदेशेला आ पच्चरकाणने जावथी सेवीने अनंता जीवो निराबाध एवा साश्वता सुखने पाम्या ठे.

॥ इति पच्चरकाण जाष्य समाप्त.

श्री इंद्रिय पराजय शतक.

(आर्यावृत्तम्)

सुच्चिय सूरो सो चेव पंमिठ तं पसंसिमो निच्चं ॥
इंदियचोरेहिं सया, न लुटियं जस्स चरणधणं ॥१॥

शब्दार्थः—तेज शूरवीर अने तेज पंमित. वली तेनीज अमे निरंतर प्रशंसा करीये ठीये के, जेनुं चारित्ररूप धन निरंतर इंद्रियरूप चोरोए लुंटी लीधुं नथी. ॥ १ ॥

इंदिय चवलतुरंगे, दुग्गइ मग्गाणु धाविरे निच्चं ॥
नाविअ नवस्सरुवो, रूंजइ जिणवयण रस्सीहिं २

शब्दार्थः--इंद्रियरूप चपल घोमाउ निरंतर डुर्गतिरूप मार्गमां दोमी रह्या ठे, तेमने संसार स्वरूपनी नावना करनारो पुरुष श्री जिनराजनां वचनरूप रासथी रोके ठे. ॥ २ ॥

इंदियधुत्ताणमहो, तिलतुसमित्तंपि देसु मा पसरं ॥
जइ दिन्नो तो नीउ, जत्थ खणो वरिसकोमिसमं ॥३॥

शब्दार्थः--हे प्राणिन् ! तुं इंद्रियरूप चोरोने तलनां फोतरा मात्र पण प्रसरवा दइश नहि. कारण जो प्रसरवा दिधा तो ज्यां एक क्षण कोमो वर्ष समान थाय तेवां डुःखो पामीश. ॥३॥

अजिइंदिएहिं चरणं, कठंव घुणेहि किरइ असारं ॥
तो धम्मत्थिहि दढं, जइयव्वं इंदियजयंमि ॥ ४ ॥

शब्दार्थः--इंद्रियने न जीतनारा प्राणीनुं चारित्र घुणे (लाकमांना जीवोए) करेलां लाकमांनी पेठे सार रहित ठे, माटे धर्मना अर्थिए इंद्रियोने जीतवामां दृढ उद्यम करवो. ॥४॥

जह कागिणीउ हेउं, कोमी रयणाण हारए कोई ॥
तह तुत्र विसय गिद्धा, जीवा हारंति सिद्धिसुहं ॥५॥

शब्दार्थः—जेम कोइ मूर्ख एक कोमीने माटे कोमी रत्नने हारि जाय तेम तुच्छ विषयमां आसक्त थयेला जीवो मोक्ष सुख हारी जाय ठे. ॥ ५ ॥

तिलमित्तं विसयसुहं, डुहं च गिरिरायसिंगतुंगयरं ॥
नवकोमिहिं न निठइ, जं जाणसु तं करिज्जासु ॥६॥

शब्दार्थः—तल मात्र विषय सुख छे. अने दुःख मेरुपर्वना उंचा शिखर जेवुं छे. वली ते दुःख कोमो नव सुधी खुटे तेम नथी, माटे जीव ! जेम जाण तेम कर. ॥ ६ ॥

(शार्दूलविक्रीमितवृत्तम्.)

नुंजंता महुरा विवागविरसा किंपागतुल्ला इमे,
कछुकंडुअणंव दुक्खजणया दावेंति बुद्धिं सुहे ॥
मझन्हे मयतिन्हियब सययं मिह्राभिसंधिप्पया,
नुत्ता दिंति कुजम्म जोणिगहणं नोगा महा वैरिणो ७

शब्दार्थः-किंपाक फलनी पेठे नोगवतां मधुर, पण परिणामें प्राणनो नाश करनारा, खसना फोल्लाने खणवानी पेठे दुःख आपनारा, मध्यान्ह वखते मृग तृष्णानी पेठे निरंतर खोटा अनिप्राय आपनारा अने महा वैरी सरखा नोगो नोगवनाराने कुजन्मरूप गहन योनी आपे छे. ॥७॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

सक्का अग्गि निवारेउं, वारिणो जलिउवि हु ॥
सव्वोदहिजलेणावि, कामग्गि दुन्निवारउं ॥ ८ ॥

शब्दार्थः–ऊल दलता अग्निने पाणीवमे निवारी शकाय, पण सर्व समुड्रोनां पाणीथी कामरूप अग्नि निवारी शकातो नथी.

(आर्यावृत्तम्)

विसमिव मुहंमि महुरा, परिणाम निकाम दारुणा विसया॥
कालमणंतं नुत्ता, अज्जवि मुत्तं न किं जुत्ता ॥९॥

शब्दार्थः--हे जीव ! तें आरंभे मीठा, पण परिणामे अ-
त्यंत दारुण एवा विषयोने अनंतकाल सुधी भोगव्या, तोपण ते-
ने हजी त्यजी देतो नथी ते शुं तने योग्य छे ? ॥९॥

विसयरसासवमत्तो, जुत्ताजुत्तं न याणई जीवो ॥
झूरइ कलुणं पच्छा, पत्तो नरयं महाघोरं ॥ १० ॥

शब्दार्थः—विषयरसरूप मदिरामां मदोन्मत्त थयेलो जीव
योग्य तथा अयोग्य जाणतो नथी, परंतु ज्यारे महा घोर नरक
पामे छे त्यारे पाछलथी दीन थइ झुरे छे. ॥१०॥

जह निंबदुम्मपत्तो, कीडो कडुअंपि मन्नए महुरं ॥
तह सिद्धिसुहपरुक्खा, संसारदुहं सुहं बिंति ॥११॥

शब्दार्थः--जेम लींबडानां पांदडामां रहेलो कीडो, ते पां-
दडाने कडवुं छतां मीठुं माने छे तेम मोक्षसुखथी छपरांग जी-
वो संसारना दुःखने सुख कहे छे. ॥११॥

अथिराण चंचलाण य, खणमित्त सुहंकराण पावाणं॥
दुग्गइ निबंधणाणं, विरमसु एआण भोगाणं ॥१२॥

शब्दार्थः--हे जीव ! अस्थिर, चंचल, क्षणमात्र सुखने आ-
पनारा, महा पापरूप अने दुर्गतिना बंधननुं कारण; एवा आ
भोगोथी तुं विराम पाम. ॥१२॥

पत्ताय कामभोगा, सुरेसु असुरेसु तहय मणुएसु ॥
न य जीव तुज्झ तित्ती, जलणस्सव कठनियरेणं ॥१३॥

शब्दार्थः--हे जीव ! देवने विषे, असुर कुमारने विषे, तेमज म-
नुष्यने विषे तुं कामभोगोने पाम्यो, तो पण काष्ठ नाखवाथी जेम
अग्नि तृप्त थतो नथी तेम तुं पण कामभोगथी तृप्त थतो नथी.

(काव्यम्)

जहा य किंपागफला मणोरमा रसेण वन्नेण य भुंजमाणा
ते खुड्डए जीविय पच्चमाणा, एउवमा कामगुणा विवागे १४

शब्दार्थः—जेम किंपाक फलो रसथी, वर्णथी अने खावाथी मनोहर लागे छे; परंतु पचता एवा ते फलो जीवितने खुटाडे छे तेम काम गुणो परिणामे तेवाज जाणवा. ॥ १४ ॥

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

सव्वं वीलविअं गीयं, सव्वं नट्टं विडंबणा ॥
सव्वे आभरणा भारा, सव्वे कामा दुहावहा ॥१५॥

शब्दार्थः--सर्व प्रकारनां गीत विलाप तुल्य छे, सर्व प्रकारनां नाटक विटंबना तुल्य छे, सर्व प्रकारनां आभरणो-घरायां भार तुल्य छे, तेमज सर्व प्रकारना कामभोगो दुःखदायक छे.

(आर्यावृत्तम्)

देविंद चक्कवट्टि-त्तणाइ रज्जाइ उत्तमा भोगा ॥
पत्ता अणंतखुत्तो, न य हं तत्तिं गउ तेहिं ॥१६॥

शब्दार्थः--अहो! देवेंद्र अने चक्रवर्तिनां राज्यो तथा उत्तम भोगोने हुं अनंतीवार पाम्यो, तोपण तेथी तृप्ति पाम्यो नहि.

संसारचक्कवाले, सव्वेवि य पुग्गला मए बहुसो ॥
आहारिया य परिणा-मिया य नय तेसु तित्तोऽहं १७

शब्दार्थः--संसाररूप चक्रवालमां सर्व प्रकारना पुद्गलोने में घणीवार खाधा अने परिणमाव्या; तथापि तेथीहुं तृप्ति पाम्यो नहि.

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

उवलेवो होइ भोगेसु, अभोगी नोवलिप्पई ॥
भोगी भमइ संसारे, अभोगी विप्पमुच्चई ॥ १८ ॥

शब्दार्थः--भोगी पुरुषो भोगमां लपटाय छे अने अभोगी पुरुषो लपटाता नथी; एटलाज माटे भोगी संसारमां भमे छे अने अभोगी संसारथी मूकाय छे. ॥ १८ ॥

अल्लो सुक्को य दो छूढा, गोलया मट्टियामया ॥
दोवि आवडिआ कुड्डे, जो अल्लो तत्थ लग्गई॥१९॥
एवं लग्गंति दुम्मेहा, जे नरा कामलालसा ॥
विरत्ताउ न लग्गंति, जहा सुक्के य गोलए ॥२०॥

शब्दार्थः—लीलो अने सूको एवा बे माटीना गोला भींत तरफ फेंक्या, ते बे गोला भींते अफलाया, परंतु तेमांथी जे लीलो गोलो हतो, ते भींते चोटी रह्यो अने सूको गोलो न चोटी रह्यो ए प्रकारे कामभोगमां लंपटी अने दुर्बुद्धि पुरुषो संसाररूप भींतमां चोटी रहे छे अने जे कामभोगथी विराम पाम्याछे, ते सूका गोलानी पेठे (संसाररूप भींतमां) चोटी रहेता नथी.

(आर्यावृत्तम्)

तणकट्ठेहिंव अग्गी, लवणसमुद्दो नईसहस्सेहिं ॥
न इमो जीवो सक्को, तिप्पेउं कामभोगेहिं ॥२१॥

शब्दार्थः—जेम घास तथा काष्ठथी अग्नि, अने हजारो नदीओथी लवणसमुद्र तृप्त थतो नथी, तेम आ जीव पण कामभोगथी तृप्त थवाने शक्तिवान थतो नथी. ॥ २१ ॥

भुत्तूणवि भोगसुहं, सुरनरखयरेसु पुण पमाएणं ॥
पिज्जइ नरएसु भेरव, कलकलतउ तंबपाणाइं ॥२२॥

शब्दार्थः—आ जीव, देव मनुष्य अने विद्याधरनी गतिमां प्रमादना वशथी भोगसुख भोगवीने नरकमां भयंकर कलकलता [illegible] तांबाना रसने पीये छे. ॥ २२ ॥

को लोजेण न निहत्त, कस्स न रमणीहि जोलिअं हियय
को मच्चुणा न गहिउ, को गिद्धो नेव विसएहिं ॥२३॥

शब्दार्थः–आ संसारमां कोण लोजथी नथी हणाणो? कोनां हृदयने स्त्रीये नथी जोलव्युं? कोने मृत्युए नथी पकड्यो? अने कोण विषयमां गृद्ध नथी.? ॥ २३ ॥

(काव्यम्.)

खणमित्त सुरका वहुकाल दुरका, पगाम दुरका अनिकाम सुरका ॥ संसार मोरकस्स विपरकनूआ,
खाणी अणत्थाणउ कामजोगा ॥ २४ ॥

शब्दार्थः–हे जीव! क्षणमात्र सुखने आपनारा, घहु काल दुःखने आपनारा, अत्यंत दुःखने आपनारा, तुछ सुखने आपनारा, संसारथी मुक्त थवामां शत्रुजूत, अर्थात् संसारने वधारनारा अने अनर्थनी खाण एवा आ कामजोगो छे. ॥ २४ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

सवगहाणं पनवो, महागहो सवदोस पायहि ॥
कामग्गहो डरप्पा, जेणनिजूअं जगं सधं ॥२५॥

शब्दार्थः–सर्व ग्रह (उन्माद) नुं उत्पत्ति स्थान, म्होटो ग्रह, सर्व प्रकारना दोष प्रवर्त्तावनारो अने डुरात्मा एवो कामदेवरूप ग्रह छे के, जेणे आ सर्व जगत्ने वश करी लीधुं छे. ॥ २५ ॥

जह कछुल्लो कच्छु, कंडुअमाणो डुहं मुणइ सुरकं ॥
मोहउरा मणुस्सा, तह कामडहं सुहं विंति ॥२६॥

शब्दार्थःजेम खसवालो माणस खसने खणतो छतो तेथी थतां डुःखने सुख माने छे तेम मोहथी आतुर थयेला माणसो कामदेवना डुःखने सुख माने छे. ॥ २६ ॥

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

सल्लं कामा विसं कामा, कामा आसीविसोवमा ॥
कामे य पढेमाणा, अकामा जंति दुग्गइं ॥ २७ ॥

शब्दार्थ—कामभोग शल्य छे, कामभोग विष छे अने कामभोग आशीविष झेर (सर्पनी दाढमां रहेला झेर) जेवा छे. ते कामभोग भोगव्या नथी; परंतु तेनी प्रार्थना करवाथी एटले तेनी इच्छा राखवाथी पण जीवो दुर्गतिमां जाय छे. ॥ २७ ॥

(आर्यावृत्तम्)

विसए अवइक्कंता, पडंति संसारसायरे घोरे ॥
विसएसु निरावइक्का, तरंति संसारकंतारे ॥२८॥

शब्दार्थः-विषयनी अपेक्षा (वांछना) करनारा जीवो बीहामणा संसार समुद्रमां पडे छे अने विषयथी निरपेक्ष (अवंछक) एवा जीवो संसार रूप अटवीने तरे छे. ॥ २८ ॥

छलिया अवयक्कंता, निरावयक्का गया अविग्घेणं ॥
तम्हा पवयणसारे, निरावयक्का होअव्वं ॥ २९ ॥

शब्दार्थः-विषयनी अपेक्षा-वांछना करनारा जीवो छलाणा एटले संसारमां रह्या अने विषयथी निरपेक्ष- अवंछक एवा जीवो अविघ्नपणे मोक्षमां गया. ते कारण माटे प्रवचन एटले सिद्धान्तनो सार ए छे के, विषयथी निरपेक्ष थवुं. ॥ २९ ॥

विसयाविक्खो निवडइ, निरविक्खो तरइ दुत्तरभवोघं ॥
देवीदीवसमागय, भाउअजुअलेण दिठंतो ॥३०॥

शब्दार्थः-रत्नदेवीना दृष्टान्तमां कहेला (जिनरक्षित अने जिनपालित ए) बे भाइओना दृष्टान्ते विषयनी अपेक्षा करनारा जीवो (जिनरक्षितनी पेठे), संसार समुद्रमां पडे छे अने विषय

थी निरपेक्ष थयेला जीवो (जिनपालितनी पेठे)दुस्तर एवा भवना छेघने--संसार समुद्रने तरे छे. ॥ ३० ॥

जं अइतिक्खं दुक्खं, जं च सुहं उत्तमं तिलोअंमि ॥
तं जाणसु विसयाणं, वुड्ढि क्खय हेउअं सव्वं ॥ ३१ ॥

शब्दार्थः-हे जीव! त्रण लोकमां जे अतितिक्ष्ण दुःख अने जे उत्तम सुखछे ते सर्व विषयोनी वृद्धि अने क्षयनुं हेतुछे,एम तुं जाण.

इंदियविसयपसत्ता, पडंति संसारसायरे जीवा ॥
पक्खिव छिन्नपंखा, सुसीलगुण पेहुणविहूणा ३२

शब्दार्थः--पंचेंद्रियना विषयमां आसक्त थएला जीवो उत्तम आचार अने शीलगुणरूप पांखो विना, छेदाणी छे पांखो जेनी एवा पक्षीनी पेठे संसार समुद्रमां पडे छे. ॥ ३२ ॥

न लहइ जहा लिहंतो, मुहल्लियं अठ्ठिअं जहा सुणउ
सोसइ तालुअ रसिअं, विलिहंतो मन्नए सुक्खं॥३३॥
महिलाण कायसेवी, न लहइ किंचिवि सुहं तहा पुरिसो॥
सो मन्नए वराउ, सयकायपरिस्समं सुक्खं॥३४॥युग्मम्.

शब्दार्थः—जेम कूतरो म्होटा हाडकाने चाटतो छतो एम नथी जाणतो के, हुं म्हारा पोतानाज तालुआनी रसीने सोसवुं छुं! तेथीज ते हाडकाने विशेष चाटतो छतो जेम सुख माने छे तेम स्त्रीनी कायानो सेवनार, एटले विषय सेवनारो पुरुष तेथी जरा पण सुख नथी पामतो; तथापि ते रांक पुरुष पोतानी कायाना परिश्रमने सुख माने छे ! ! ! ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

सुठुवि मग्गिज्जंतो, कत्थवि कयलीइ नत्थि जह सारो॥
इंदियविसएसु तहा, नत्थि सुहं सुठुवि गविठ्ठं ॥३५॥

शब्दार्थः-सारी रीते तपासतां जेम केलमां कांइ पण सार नथी, तेम इंद्रियोना विषयमां पण सारी रीते तपासतां सुख नथी.

सिंगारतरंगाए, विलासवेलाइ जुव्वणजलाए ॥
के के जयंमि पुरिसा, नारीनइए न बुडुंति ॥३६॥

शब्दार्थ–जेमां शृंगार रूप कल्लोलो छे, विलास रूप वेलो छे अने जोबन रूप जल छे एवी स्त्री रूप नदीमां नथी बूड्या एवा जगतमां कोण कोण पुरुषो छे ? ॥ ३६ ॥

सोअसरीदुरिअदरी, कवडकुडीमहिलिया किलेसकरी ॥
वइरविरोयणअरणी, दुखखाणी सुखपडिवरका ॥३७॥

शब्दार्थः–शोकनी नदी, पापनी गुफा, कपटनी कूंडी, क्लेशनी करनारी अने वेररूप अग्निने प्रगट करवा माटे अरणीना काष्ट समान एवी स्त्री दुःखनी खाण छे अने सुखनी प्रतिपक्षी (शत्रु) छे.

अमुणिअमणपरिकम्मो, सम्मं को नाम नासिउं तरइ॥
वम्महसर पसरोहे, दिठिच्छोहे मयच्छीणं ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः–नथी करी मननी सारी शुद्धि जेणे एवो कयो पुरुष सुंदर मृगाक्षी स्त्रीना कामबाण वरसावनार नजरना सपाटामां-थी बचीने [illegible] ? ॥ ३८ ॥

परिहरसु तओ तासिं, दिठिं दिठिविसस्सव अहिस्स॥
जं रमणि नयणबाणा, चरित्तपाणे विणासंति ॥३९॥

शब्दार्थः–ते कारण माटे हे जीव! दृष्टिविष सर्पना जेवी ते दृष्टि जेनी एवी अने जे स्त्रीनां नयन रूपी बाणो चारित्र रूप प्राणनो विनाश करे छे तेवी स्त्रीनो तुं त्याग कर. ॥३९॥

सिद्धंतजलहि पारं–गओवि विजिइंदिओवि सूरोवि ॥
दढचित्तोवि छलिज्जइ, जुवइ पिसाइहिं खुद्दाहिं ॥४०॥

शब्दार्थः–सिद्धांत रूप समुद्रने पार पामेला, [illegible] करी इंद्रियो जीतनारा, शूरा अने दृढ चित्तवाळा एवा पुरुष पण युवति रूप क्षुद्र पिशाचणीथी छलाय छे. ॥ ४० ॥

महु॒यनवणीयविलत्तं, जह जोयइ जलणसंनिहाणंमि॥
तह रमणिसंनिहाणे, विद्दवइ मणो मुणीणंमि ॥४१॥

शब्दार्थः--जेम अग्निनी पासे रहेलुं मीण अने माखण ओग-ली जाय छे, तेम स्त्रीनी पासे रहेला मुनितुं मन पण ओगली जाय छे अर्थात् विकारवंत थाय छे. ॥ ४१ ॥

नीअंगमाहि सुपउ-हराहि उप्पित्त मंथरगईहिं ॥
महिला हि निमग्गा इव, गिरिवर गुरुआवि भिज्जंति४२

शब्दार्थः--नीच साथे गमन करती, सारा पयोधर (स्तन) वाली अने देखवा लायक मंद गतिवाली स्त्री के,जे जाणे नदी समा नछे तेमां बूडेला (पुरुषो) पर्वत जेवा म्होटा होय तो पण भेदायछे.

विसयजलं मोहकलं, विलासविब्बोअ जलयराइन्नं ॥
मय मयरं उत्तिन्ना, तारुण्ण महन्नवं धीरा ॥४३॥

शब्दार्थः--विषय रूप जलवाला, मोह रूप कादववाला, वि-लास अने हावभाव रूप जल जंतुओथी भरेला अने मद रूप म-गर वाला जोवन रूप महासमुद्रने धीर पुरुषो तरेला छे. ॥४३॥

जइवि परिचत्तसंगो, तव तणुअंगो तहावि परिवडई॥
महिला संसग्गीए, कोसा भवणुसि य मुणिव ॥४४॥

शब्दार्थः--जो के, कुटुंबादिकनो संग जेणे त्याग कर्यो होय अने तपथी शरीर दूबलुं कर्युं होयःतोपण ते,स्त्रीना संसर्गथी को-श्यावेश्यानेघेररहेला(सिंहगुफावासी)मुनिनीपेठे चारित्रथी पडेछे.

सव्वग्गंथविमुक्को, सीईभूउ पसंतचित्तो अ ॥
जं पावइ मुत्तिसुहं, न चक्कवट्टीवि तं लहई ॥४५॥

शब्दार्थः-सर्व परिग्रहथी मूकायेलो,शांत थयेलो अने शांत चित्त वालो माणस जे सुख पामे छे ते सुख चक्रवर्ति पण पामतो नथी.

खेलंमि पडिअमप्पं, जह न तरइ मच्छिआवि मोएऊं ॥
तह विसयखेलपडिअं, न तरइ अप्पंपि कामंधो ४६

शब्दार्थः--जेम बलखामां पडेली माखी तेमां पोताने मूकावा समर्थ थती नथी, तेम विषय रूप खेलमां पडेलो कामांध जीव पण तेमांथी नीकलवा समर्थ थतो नथी. ॥ ४६ ॥

जं लहइ वीयराउ, सुक्खं तं मुणइ सुच्चिअ न अन्नो ॥
नवि गत्ता सूअरउ, जाणइ सुरलोइअं सुक्खं ॥४७॥

शब्दार्थः-जेम खाडामां रहेलो सूअर देवलोकनां सुखने न जाणे, तेम जे सुखने वीतराग पामे, ते सुखने वीतराग ज जाणे; पण बीजा कोइ (संसारी जीव) न जाणे. ॥ ४७ ॥

जं अज्जवि जीवाणं, विसएसु दुहावहेसु पडिबंधो ॥
तं नज्जइ गुरुआणवि, अलंघणिज्जो महामोहो ॥४८॥

शब्दार्थः--जे कारण माटे हजी सूधी पण जीवोने दुःखने उत्पन्न करनारा विषयोमां प्रतिबंध छे. ते माटे एम जणाय छे के, मोटाने पण महामोह अलंघनीय छे. ॥४८॥

जे कामंधा जीवा, रमंति विसएसु ते विगयसंका ॥
जे पुण जिणवयणरया, ते भीरू तेसु विरमंति ॥४९॥

शब्दार्थः--जे कामभोगथी आंधला थयेला जीवो छे, ते शंका रहित थइने विषय सुखमां रमे छे अने जे जिनवचनमां रक्त छे, ते संसारथी बीक पामीने विषयथी विराम पामे छे. ॥४९॥

([illegible])

असुइमुत्तमलपवाहरूवयं, वंतपित्तवसमज्जफोफसं ॥
मेयमंसबहुहडुकरंडयं, चम्ममित्तपच्छाइयजुवइअंगयं ५०

शब्दार्थः—अशुची, मूत्र, विष्टाना प्रवाह रूप, वमन पित्त, [illegible]

स तथा घणा हाडकांनो करंडीयारुप अने मात्र चामडाथी ज ढांकेलुं, एवुं स्त्रीनुं शरीर छे. ॥ ५० ॥

मंसं इमं मुत्तपुरीसमीसं, सिंघाणखेलाइ अनिच्चरंतं ॥
एयं अणिच्चं किमिआणवासं, पासं नराणं मइबाहिराणं ५१

शब्दार्थः—मांस, मूत्र अने विष्टाथी मिश्रित, सिंघाण-लींट अने बलखाथी झरतुं, अनित्य तेमज कृमीयाउनुं घर एवुं आ स्त्रीनु शरीर, ते अल्प बुद्धिवाला पुरुषोने पास समान छे. ५१

(आर्यावृत्तम्.)

पासेण पंजरेण य, बज्झंति चउप्पया य पक्खीई ॥
इय जुवइपंजरेणं, बद्धा पुरिसा किलिस्संति ॥५२॥

शब्दार्थः—जेम पासे अने पांजरे करीने बंधायेला जनावरो तथा पक्षीयो क्लेश पामे छे, तेम आ स्त्रीरूपी पांजरे करीने बंधायेला पुरुषो पण क्लेश पामे छे. ॥ ५२ ॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्.)

अहो मोहो महामल्लो, जेण अम्मारिसावि हु ॥
जाणंतावि अणिच्चत्तं, विरमंति न खणंति हु ॥५३॥

शब्दार्थः—अहो ! मोह रूप मल्ल बहुज म्होटो छे. जेणे करीने अमारा सरखा जीवो पण (कामभोगने) अनित्य जाणतां छतां तेथी क्षण मात्र पण विराम पामता नथी ! ॥ ५३ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

जुवइहिं सह कुणंतो, संसग्गिं कुणइ सयलदुक्खेहिं ॥
नहि मुसगाणं संगो, होइ सुहो सह बिडालेहिं ॥५४॥

शब्दार्थः—जेम बिलाडोनी साथे संसर्ग करतो छतो उंदर सुखी थतो नथी, तेम स्त्रीनी साथे संसर्ग करतो छतो पुरुष पण

सर्व दुःखना संसर्गने करे छे. अर्थात् अनेक दुःखने पामे छे.

हरिहरचउराणण चं, दसूरखंदाइणोवि जे देवा ॥
नारीण किंकरत्तं, कुणंति धिद्धी विसयतिन्हा ॥५५॥

शब्दार्थः--विष्णु, ईश्वर, ब्रह्मा, चंद्र, सूर्य, अने कार्तिकस्वामी विगरे जे कोइ देवो, ते सर्वे (मात्र विषयने माटे) स्त्रीनुं किंकरपणुं करेछे ! माटे धिक्कार छे धिक्कार छे विषयनी तृष्णाने !!!

(काव्यम्.)

सीअं च उन्हं च सहंति मूढा, इत्थिसु सत्ता अविवेअवंता
इलाइपुत्तंव चयंति जाइं, जीअं च नासंति अ रावणुव ५६

शब्दार्थः--विवेक विनाना अने स्त्रीमां आसक्त थयेला मूर्ख पुरुषो, इलाची पुत्रनी पेठे पोतानी उत्तम जातिनो त्याग करीने [illegible] अने ताघने सहन करे छे. तेमज रावणनी पेठे जीवीतव्यने पण नाश पमाडे छे. ॥ ५६ ॥

(आर्यावृत्तम.)

[illegible]वि जीवाणं, सुदुक्कराइं ति पावचरियाइं ॥
[illegible] जा सा सा सा, पच्चाएसो हु इणमो ते ॥५७॥

शब्दार्थः--जीवोनां अतिशे पापचरित्र एटले माठां आचरण कहेवाने पण अतिशे दुष्कर छे. अर्थात् मुखे कह्यां न जाय एवां छे. [illegible] हे भगवन्! [illegible] धारण करीने, ते स्त्री [illegible] [illegible] ते स्त्री, [illegible] छे. गुरु महाराज [illegible] आ दृष्टांत कह्युं. ॥ ५७ ॥

[illegible] जीयं, अथिरा लच्छीवि भंगुरो देहो ॥
[illegible] कामभोगा, निबंधणं दुक्खलक्खाणं ॥ ५८ ॥

[illegible]—[illegible] पाणीना [illegible] छे, लक्ष्मी अ

स्थिर छे, देह क्षणभंगुर छे तेमज कामभोग तुच्छ अने लाखो गमे दुःखनां कारण छे. ॥ ५८ ॥

नागो जहा पंकजलावसन्नो, दठ्ठुथलं नाभिसमेइ तीरं ॥
एवं जिआ कामगुणेसु गिद्धा, सुधम्ममग्गे न रया हवंति

शब्दार्थः—जेम हाथी कादववाला' जलमां बूडयो छतो जो के स्थलने देखे छे. तथापि त्यांथी कांठे आवी शकतो नथी तेम कामगुणमां गृद्ध थयेला जीवो पण सुधर्मनां मार्गमां रक्त थता नथी. ॥ ५९ ॥

जह विठ्ठपुंजखुत्तो, कीमि सुहं मन्नए सयाकालं ॥
तह विसयासुइरत्तो, जीवोवि मुणइ सुहं मूढो ॥६०॥

शब्दार्थ—जेम विष्टाना ढगलामां खूचेलो करमीयो (जो के तेमां सदाकाल दुःख छे, तथापि) तेमां सदाकाल सुख मानेछे, तेम विषय रूप अशुचीमां रक्त थयेलो मूढ जीव पण (विषयमां) सुख माने छे. ॥ ६० ॥

मयरहरोव जलेहिं, तहवि हु दुप्पुरई इमे आया ॥
विसयामिसंमि गिद्धो, भवे भवे वच्चइ न तत्तिं ॥६१॥

शब्दार्थः-जेम पाणीये करी समुद्र पूरावो दुष्कर छे, तेम विषयरूप आमिष (मांस) मां गृद्ध थयेलो आ आत्मा पण विषयो पूरावो दुष्कर छे अने तेने लोधेज ते भव भवमां तृप्ति पामतो नथी. ॥ ६१ ॥

विसय विसट्टा जीवा, उब्भडरूवाइएसु विविहेसु ॥
भवसयसहस्सदुलहं, न मुणंति गयंपि निअजम्मं॥६२॥

शब्दार्थः-विषयरूप विषथी पीडायेला जीवो उद्भटरूप आदि देइ विविध प्रकारनां रूपथी पोतानो भव गमावे छे, परंतु

विधाताए जाल मांड्यो छे. जे जालमां मूढ एवा मनुष्यो, तिर्यं-
चो, सुरो अने असुरो बंधाय छे! ८९

विसमा विसय भुअंगा, जेहिं डसिआ जिआ भववणंमि ॥
कीसंति दुहग्गीहिं, चुलसीई जोणि लक्खेसु ॥ ९० ॥

शब्दार्थः—भव रूपी वनमां अर्थात् संसार रूपी वनमां र
खडता एवा जे जीवोने विषम एवा विषय रूप सर्पो डस्या, ते
जीवो दुःख रूप अग्निये दुःख पामता थका चोराशीलाख जी
वा योनिमां क्लेश पामे छे. ॥ ९० ॥

संसारचारगिम्हे, विसयकुवाएण लुक्किया जीवा ॥
हियमहियं अमुणंता, अणुहवइ अणंतदुक्खाइं ॥९१॥

शब्दार्थः—संसारना मार्ग रूप ग्रीष्मकालमां विषय रूप न
ठारा वायरेथी लुकायला जीवो हित अहितने न जाणता थका
अनंत दुःखोने अनुभवे छे. ॥ ९१ ॥

हा हा दुरंत दुट्ठा, विषय तुरंगा कुसिक्खिया लोए ॥
भीसण भवाडवीए, पाडंति जिआण मुद्धाणं ॥९२॥

शब्दार्थः—हा! हा! आ संसाररूप लोकमां दुःखे करी अं-
त छे जेनो दुष्ट अने शिक्षा विना केळवेला एवा विषयरूप घोडाओ
मुग्ध जीवोने भयंकर एवी भवरूप अटवीमां पाडे छे. ॥ ९२ ॥

विसयपिवासातत्ता, रत्ता नारीसु पंकिलसरंमि ॥
दुहिआ दीणा खीणा, रुलंति जीवा भववणंमि ॥९३॥

शब्दार्थः—विषयरूप तृषाथी तपेला अने स्त्रीमां रक्त थये
ला [illegible] [illegible] [illegible] भवरूपी वनमां [illegible] रोळे छे. ॥ ९३ ॥

[illegible] निअंनिआउ तुह जीव
[illegible]

निययाइ इंदियाइं, वच्चिनिअत्ता तुरंगुव ॥ ए४ ॥

शब्दार्थः—हे जीव! अत्यंत धिरजरूप दोरमाथी वश्य राखेलो पोतानी इंद्रियो, लगाममां वश्य राखेला घोमानी पेठे अतिशे फायदाकारक छे, ॥ ए४ ॥

मणवयणकायजोगा, सुनिअत्ता तेवि गुणकरा हुंति ॥
अनिअत्ता पुण जंजति, मतकरिणुव सीलवणं ॥ एए॥

शब्दार्थ——मन वचन अने कायाना योग वश्य करया छतां ते पण गुणकारी थाय छे अने नहि वश्य करया छतां मदोन्मत्त हस्तिनी पेठे शीलरूप वनने जांगे छे. ॥ एए ॥

जह जह दोसा विरमइ, जह जइ विसएहिं होइ वेरग्गं ॥
तह तह विन्नायधं, आसन्नं से य परमपयं ॥ ए६ ॥

शब्दार्थः-जेम जेम दोषो विराम पामे छे अने जेम जेम विषयथी वैराग्य थाय छे, तेम तेम जाणवुं के, तेने परमपद मोक्ष हुकडुं थाय छे, ॥ ए६ ॥

डुक्कर मेएहिं कयं, जेहिं समच्चेहिं जुवणच्छेहिं ॥
जग्गं इंदियसिन्नं, धिइपायारं विलग्गेहिं ॥ ए७ ॥

शब्दार्थः-जे पुरुष पोताना सामर्थ्यपणाथी जोवन अवस्थामां इंद्रियरूप सैन्यने जांगीने धिरजरूप प्राकार (गढ)ने वलग्या, ते पुरुषे डुष्कर काम कर्युं एम जाणवुं. ॥ ए७ ॥

ते धन्ना ताण नमो, दासोऽहं ताण संजमधराणं ॥
अद्धच्चि पच्चिराउं, जाण न हियए खम्कंति ॥ ए८ ॥

शब्दार्थः-तेज पुरुषोने धन्य छे, तेमनेज अमे नमस्कार करीए छीए अने तेज संयमधारीना अमे दास छीए के, जे पुरुषोना हृदयमां अर्द्धि आंखे जोनारी अर्थात् कटाक्षनेत्रे जोनारी स्त्री खटकती नथी. ॥ ए८ ॥

शब्दार्थः–आ घणी खेदनी वात छे के, कालरूप भमरो म्होटा शेषनागरूप नालवाळां, पर्वतोरूप केशरावाळां, दिशाओरूप पत्रवाळां, पृथ्वीरूप कमलने विषे मनुष्योरूप मकरंदनु पानकरेछे.

गायामिसेण कालो, सयलजीआणं छलं गवेसंतो ॥
पासं कयावि न मुंचइ, ता धम्मे उज्जमं कुणह ॥ ९ ॥

शब्दार्थः–छलनो शोध करतो काल गयानां मिषथी सर्व प्राणीयोनां पडखाने नथी मूकतो, माटे हे भव्य जीवो ! तमे धर्मने विषे उद्यम करो. ॥ ९ ॥

कालंमि अणाइए, जीवाणं विविहकम्मवसगाणं ॥
तं नत्थि संविहाणं, संसारे जं न संभवइ ॥ १० ॥

शब्दार्थः–अनादि काल चक्रमां भमता अने नाना प्रकारनां कर्मने वश थयेला जीवोने संसारमां कोइपण एकेंद्रियादि भेद नथी प्राप्त थयो, एम नथी. अर्थात् एकेंद्रियादि सर्व भेदोमां भमेलो छे.

(अनुष्टुब्वृत्तम्)

बंधवा सुहिणो सव्वे, पिअमाया पुत्तभारिया ॥
पेअवणाउ निअत्तंति, दाऊणं सलिलंजलिं ॥ ११ ॥

शब्दार्थः–बांधवो, सुहृदो, माता, पिता, पुत्र अने स्त्री, ए सर्वे मरेला मनुष्यने पाणीनी अंजली आपीने पछी श्मशानथी पाछा वळे छे. ॥ ११ ॥

(आर्यावृत्तम्)

विहडंति सुआ विहडंति बंधव वल्लहा य विहडंति ॥
इक्को कहवि न विहडइ, धम्मो रे जीव जिणभणिओ ॥ १२ ॥

शब्दार्थः–हे जीव ! पुत्रो, बांधवो अने स्त्रीयो ए सर्वेनो वियोग [illegible] जिनेश्वरे कहेलो एक धर्मनो [illegible] नथी. ॥ १२ ॥

अट्ठकम्मपासबद्धो, जीवो संसारचारए ठाइ ॥
अट्ठकम्मपासमुक्को, आया सिवमंदिरे ठाइ ॥ १३ ॥

शब्दार्थः--आठ कर्मरूप पासाथी बंधायलो जीव संसाररूप बंधीखानामां रहेछे अने आठ कर्मपासथी छूटेलो आत्मा मोक्ष मंदीरमां वसे छे. ॥ १३ ॥

विहवो सज्जणसंगो, विसयसुहाइं विलासललिआइं ॥
नलिणीदलग्गघोलिर, जललवपरिचंचलं सव्वं ॥१४ ॥

शब्दार्थः--लक्ष्मी, स्वजन संयोग अने विलासे करीने सुंदर एवां विषय सुख ए सर्वे कमलनां पत्र उपर कंपता रहेला पाणीना बिंदु समान अत्यंत चपल छे. ॥ १४ ॥

तं कत्थ बलं तं क-त्थ जुवणं अंगचंगिमा कत्थ ॥
सव्वमणिच्चं पिच्छह, दिठ्ठंनठ्ठं कयंतेण ॥ १५ ॥

शब्दार्थः—हे प्राणीयो! ते बल, ते यौवन अने अंगनुं सुंदरपणुं क्यां गयुं? ते कारण माटे काले करीने दीठा न दीठ जेवुं आ सर्व अनित्य जाणो. ॥ १५ ॥

घणकम्मपासबद्धो, भवनयरचउप्पहेसु विविहाउ ॥
पावइ विडंबणाउ, जीवो को इत्थ सरणं से ॥ १६ ॥

शब्दार्थः—गाढ कर्मरूप पासाथी बंधायलो जीव संसाररूप नगरना चौटामां विविध प्रकारनी विटंबना पामे छे, माटे आ संसारमां ते जीवनुं कोण रक्षण करनार छे? ॥ १६ ॥

घोरंमि गब्भवासे, कलमलजंबालअसुइबीभच्छे ॥
वसिउ अणंतखुत्तो, जीवो कम्माणुभावेण ॥ १७ ॥

शब्दार्थः–जीव, घोर अने उदरमां रहेला पदार्थोथी अशु

त्रि तेमज भयंकर एवा गर्भवासमां पोतानां कर्मना प्रभावथी
अनंतीवार वस्यो छे. ॥ १७ ॥

चुलसीइ किर लोए, जोणीणं पमुहसयसहस्साइं ॥
इक्किक्कम्मि अ जीवो, अणंत खुत्तो समुप्पन्नो ॥१८॥

शब्दार्थः—शास्त्रमां चोराशी लाख योनी कही छे अने ते द-
रेक योनीमां जीव अनंतीवार उत्पन्न थयो छे. ॥ १८ ॥

मायापियबंधुहिं, संसारत्थेहिं पूरिओ लोओ ॥
बहुजोणिनिवासीहिं, नय ते ताणं च सरणं च ॥१९॥

शब्दार्थः—संसारमां रहेला अने घणी योनीमां निवास
करनारां माता, पिता अने बंधुओए करीने आ लोक भरपुर थयो
छेः परंतु ते माता पिता विगेरे त्हारुं रक्षण करनार नथी, तेम
ते त्हारे शरण करवा योग्य नथी. ॥ १९ ॥

जीवो वाहिविलुत्तो, सफरो इव निजले तडप्फडइ ॥
सयलोवि जणो पिच्छइ, को सक्को वेअणाविगमे ॥२०॥

शब्दार्थः—पीडाथी व्याप्त थयेलो जीव जल रहित स्थानमां
मांछलानी पेठे तरफडे छे. सर्व लोक ते जीवने जुए छे, पण तेनी
पीडा दूर करवा कोण समर्थ होय ? अर्थात् कोइ नथी. २०

मा जाणसु जीव तुमं, पुत्त कलत्ताइ मज्झ सुहहेऊ ॥
निउणं बंधणमेयं, संसारे संसरंताणं ॥ २१ ॥

शब्दार्थः—हे जीव ! तुं आ पुत्र कलत्रादि म्हारां सुखनां
कारण थशे. [illegible] न जाणीश. कारणके, संसारमां भमतां
जीवोने ते पुत्रादि दृढ बंधनरूप थाय छे ॥२१॥

जणणी जायइ जाया, जाया माया पिआ य पुत्तो य ॥
अणवत्था संसारे, कम्मवसा सव्वजीवाणं ॥ २२ ॥

[illegible]

शब्दार्थ–संसारमां कर्मनां वश्यथी सर्वे जीवोने एक जात नी अवस्था रहेली नथी. कारणके, पूर्वना जवमां माता होय ते बीजा जवमां स्त्री थइ जाय, स्त्री होय ते माता थाय, पिता होय ते पुत्र थाय अने पुत्र होय ते पिता थाय ॥ २२ ॥

(अनुष्टुपवृत्तम्)

न सा जाई न सा जोणी, न तं ठाणं न तं कुलं ॥
न जाया न मुआ जत्त, सवे जीवा अणंतसो ॥२३॥

शब्दार्थः–जेमां सर्वे जीवो अनंतीवार उत्पन्न थया नथी अने मृत्यु पाम्या नथी एवी कोइ जाति, योनी, स्थान के कुल नथी.

(आर्याधृत्तम्)

तं किंपि नत्थि ठाणं, लोए वालग्गकोमिमित्तंति ॥
जत्थ न जीवा वहुसो, सुहदुक्खपरंपरं पत्ता ॥ २४ ॥

शब्दार्थः-जेमां जीवो वहुवार सुख दुःखनी परंपराने नथी पाम्या; एवुं लोकमां वालना अग्रज्ञाग जेटलुं कोइपण स्थान नथी.

सवात्त रिद्धीउ, पत्ता सवेवि सयणसंवंधा ॥
संसारे तो विरमसु, तत्तो जइ मुणसि अप्पाणं ॥२५॥

शब्दार्थः–हे जीव तने आ संसारमां सर्वे समृद्धि अने सर्वे स्वजनादि संबंध प्राप्त थाय छे, माटे जो पोताने सुखी जाणतो होय तो तेथी विराम पाम. ॥२५॥

एगो वंधइ कम्मं, एगो वहवंधमरणवणसाइं ॥
विसहइ जवंमि जमइ, एगुच्चिअ कम्मवेलवित्त २६

शब्दार्थः–जीव पोते एकलोज कर्मने बांधे छे, एकलो वध, बंधन अने मरणनी आपत्तिने सहन करे छे; वली एकलोज कर्मथी उगायो उतो संसारमां जमे छे. ॥२६॥

अन्नो न कुणइ अहिअं, हियंपि अप्पा करेइ न हु अन्नो
अप्पकयं सुहदुक्खं, भुंजसि ता कीस दीणमुहो ॥२७॥

हे प्राणिन्! त्हारुं बीजुं कोइ अहित करतुं नथी. तेमज त्हारुं पोतानुं हित पण तुं पोतेज करे छे, बीजु कोइ करतुं नथी, माटे तुं पोतानुं करेलुं सुख दुःख भोगवे छे, तो पछी शा कारण माटे दीन मुखवालो थाय छे ? ॥ २७ ॥

बहुआरंभविढत्तं वित्तं विलसंति जीव सयणगणा ॥
तज्जणियपावकम्मं, अणुहवसि पुणो तुमं चेव ॥२८॥

शब्दार्थः-हे जीव ! तें पोते बहु आरंभथी मेळवेलुं जे धन छे तेणे करीने त्हारा स्वजनो विलास करे छे अने वली ते आरंभथी उत्पन्न थयेला पापने तुं पोते एकलोज नरकमां अनुभव करीश.

अह दुक्खिआइ तह भु-क्खिआइ जह चिंतियाइ डिंभाइ
तह थोवंपि न अप्पा, विचिंतिओ जीव किं भणिमो २९

भावार्थः-अरे मूर्ख जीव ! तें जेवी रीते त्हारा दुःखी थता भुख्या थता बालकोनो विचार कर्यो छे तेवी रीते त्हारो पोतानो विचार कर्यो नथी, तो हवे तने शुं कहुं? ॥ २९ ॥

खणभंगुरं सरीरं, जीवो अन्नो अ सासयसरूवो ॥
कम्मवसा संबंधो, निब्बंधो इत्थ को तुज्झ ॥ ३० ॥

भावार्थः-शरीर क्षणभंगुर अने तेथी जुदो एवो जीव शाश्वत स्वरूपवालो छे. वली ए बेनो कर्मना वशथी संबंध थयो छे तो पछी हे जीव! त्हारे ए शरीरने विषे मूर्छा शामाटे राखवी जोइये?

कह आयं कह चलिअं, तुमंपि कह आगओ कहं गमिहो ॥
अन्नुन्नंपि न याणह, जीव कुडुंबं कओ तुज्झ ॥ ३१ ॥

भावार्थः-हे जीव! आ कुटुंब क्यांथी आव्युं अने क्यां गयुं?

तुं पण क्यांथी आव्यो अने क्यां जइश? वळी तमे परस्पर एक बीजाने जाणता नथी तो पछी ते कुटुंब ह्हारुं क्यांथी? ३१

खणभंगुरे सरीरे, मणुअभवे अब्भपडलसारित्थे ॥
सारं इत्तिअमित्तं, जं कीरइ सोहणो धम्मो ॥ ३२ ॥

शब्दार्थः-शरीर क्षणभंगुर अने मनुष्यभव मेघनां समूह जेवो छे, जेथी उत्तम धर्म आचरवो एज मात्र सार छे. ३२

(अनुष्टुप् वृत्तम्)

जम्म दुक्खं जरा दुक्खं, रोगा य मरणाणि य ॥
अहो दुक्खो हु संसारे, जत्थ कीसंति जंतुणो ॥ ३३ ॥

शब्दार्थः-जन्म संबंधी दुःख, जरावस्था संबंधी दुःख, रोगो अने मरण ए पण दुःखमय छे; माटे आ संसारज दुःखरूप छे के, जेमां प्राणीयो क्लेश पामे छे. ॥ ३३ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

जाव न इंदियहाणी, जाव न जररक्खसी परिफुरइ ॥
जाव न रोगविआरा, जाव न मच्चू समुल्लिअई ॥३४॥

शब्दार्थः-ज्यां सुधीमां इंद्रियो क्षीण थइ नथी, ज्यां सुधीमां जरावस्थारूपी राक्षसी प्रगट थइ नथी, ज्यां सुधीमां रोगविकारो उत्पन्न थया नथी अने ज्यां सुधीमां मृत्यु उदय आव्युं नथी, त्यां सुधीमां धर्म साधन करी लेह. ॥ ३४ ॥

जह गेहंमि पलित्ते, कूवं खणीउं न सकए कोइ ॥
तह संपत्ते मरणे, धम्मो कह कीरए जीव ॥ ३५ ॥

शब्दार्थः-जेम घर सळगवा लाग्या पछी कोइ माणस कूवो खोदवाने समर्थ थतो नथी, तेम मरण नजीक आव्या पछी हे आत्मा तुं धर्म शी रीते करी शकीश? ॥ ३५ ॥

रूवमसासयमेअं, विज्जुलयाचंचलं जए जीअं ॥
संझाणुरागसरिसं, खणरमणीअं च तारुन्नं ॥ ३६ ॥

शब्दार्थः--आ रूप अशाश्वतुं छे, जगत्‌मां जीवित विजली नी पेठे चपल छे अने तारुण्यपणुं पण संध्याना रंग जेवुं क्षण रमणीक छे. ॥ ३६

गयकन्नचंचलाओ, लच्छीओ तिअसचावसारित्थं ॥
विसयसुहं जीवाणं, बुज्झसु रे जीव मा मुज्झ ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः—जीवोने लक्ष्मीयो हाथीना कान जेवी चंचल अने विषय सुख इंद्रनां धनुष्य सरखुं चपल छे, माटे अरे जीव! तुं बोध पाम, पण मोह न पाम. ॥ ३७ ॥

जह संझाए सउणा-णसंगमो जह पहे अ पहिआणं ॥
सयणाणं संजोगो, तहेव खणभंगुरो जीव ॥ ३८ ॥

शब्दार्थः--हे जीव! जेवी रीते संध्या समये पक्षीयोनो अने रस्तामां मुसाफर लोकोनो समागम थायछे, तेवीज रीते आ स्वजनोनो समागम पण क्षणभंगुर छे. ॥ ३८ ॥

(उपजाति वृत्तम्)

निसाविरामे परिभावयामि, गेहे पलित्ते किमहं सुआमि
डज्झंतमप्पाणमुवेक्खयामि, जं धम्मरहिओ दिअहा गमामि

शब्दार्थ-हे जीव! तने आवो विचार केम नथी आवतो के, हुं पाछली रात वखते मनमां एटले आवा विचार करूं के जे हुं धर्म रहित दिवसो केम गमावुं छुं? घर बळता मांहे सुते केम सुइ रहुं छुं? अने बळता एवा आत्मानी केम उपेक्षा करूं छुं?

(अनुष्टुब्वृत्तम्.)

जा जा वच्चइ रयणी, न सा पडिनिअत्तइ ॥

समान, संपत्तियो जळना तरंगो समान अने प्रेम स्वप्न समान छे, माटे जो तुं तेवुं जाणतो होय तो धर्म आचर. ॥ ४४ ॥

(रथोद्धतावृत्तम्)

संझरागजलबुब्बुओवमे, जीविए अ जलबिंदुचंचले ॥
जुव्वणे य नइवेगसन्निभे, पावजीव कि मियं न बुझसे ४५

शब्दार्थः--संध्या समयनो रंग, पाणीना परपोटा अने दर्भना अग्रभाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंदु, तेना समान जीवित छते वळी नदीना वेग समान युवावस्था छते हे पाप जीव ! तुं बोध नथी पामतो ए शुं ? ॥ ४६ ॥

(आर्यावृत्तम्)

अन्नत्थ सुआ अन्नत्थ गेहिणी परिअणोवि अन्नत्थ ॥
भूअबलिव्व, कुडुंबं, पक्खित्तं हयकयंतेण ॥ ४६ ॥

शब्दार्थः--अरे निंदा करवा योग्य काळे भूतने बलिदान आपवानी पेठ पुत्रोने जूदी गतिमां, स्त्रीने जूदी गतिमां अने परिवारने जूदी गतिमां; एम सर्व कुटुंबने जूदुं जूदुं करी नाख्युं छे.

जीवेण [illegible] मि-लियाइ, देहाइ जाइ संसारे ॥
ताणं न सागरेहिं, कीरइ संखा अणंतेहिं ॥ ४७ ॥

शब्दार्थः--हे आत्मन! आ संसारमां जीवे, नवे नवमां जे देहो मे[illegible] अनंता सागरोवमथी पण संख्या थइ शके तेम नथी.

[illegible] सागरसलिलाओ बहुयरं होइ ॥
[illegible] माऊणं अन्नमन्नाणं ॥ ४८ ॥

शब्दार्थः--हे आत्मन! [illegible] जन्मनी रुदन करती [illegible] समुद्रनां जळथी पण वधारे [illegible] ॥

[illegible]

तत्तो अणंतगुणिअं, निगोअमझे दुहं होइ ॥ ४ए ॥

शब्दार्थः-नरकमां नारकी जीवो जे घोर अनंत दुःख पामे छे, तेनाथी अनंतगणुं दुःख निगोदमां छे, ॥ ४ए ॥

तंमिवि निगोअमझे, वसिउ रेजीव विविहकम्मवसा ॥
विसहंतो तिरकदुहं, अणंतपुग्गलपरावत्ते ॥ ५० ॥

शब्दार्थः-अरे जीव! विविध कर्मना वश्यथी ते निगोदनी मध्ये पण तुं तिक्षण दुःखने सहन करतो उतो अनंत पुद्गलपरावर्त्त काल सुधी वश्यो छे. ॥ ५० ॥

नीहरिअ कहवि तत्तो, पत्तो मणुअत्तणंपि रेजीव ॥
तत्थवि जिणवरधम्मो, पत्तो चिंतामणिसरित्थो ॥५१॥

शब्दार्थः—अरे जीव ! महा कष्टे करीने ते निगोदथी नीकली तुं मनुष्य पणाने पाम्यो छे अने तेमां पण चिंतामणि रत्न सरखा जिनेश्वरना धर्मने पाम्यो छे. ॥ ५१ ॥

पत्तेवि तंमि रेजीव, कुणसि पमायं तमं तुमं चेव ॥
जेणं जवंधकूवे, पुणोवि पमिउ दुहं लहसि ॥ ५२ ॥

शब्दार्थः—अरे जीव! ते जिनेश्वर धर्म प्राप्त थया उता पण तुं जेनाथी फरीने पण संसाररूप कूवामां पमीने दुःख पमाय एवा प्रमादने करे छे. ॥ ५२ ॥

उवलद्धो जिणधम्मो, न य अणुचिन्नो पमायदोसेणं ॥
हा जीव अप्पवेरि अ, सुबहुं परउ विसूरहिसि ॥ ५३ ॥

शब्दार्थः-हे जीव तने जिनेश्वरनो धर्म प्राप्त थयो, पण तें प्रमादना दोषथी तेने सेव्यो नहि; जेथी हे आत्मवैरी! तुं आगल बहुज खेद करीश. ॥ ५३ ॥

सोअंति ते वराया, पत्था समुवछिअंमि मरणंमि ॥

पावपमायवसेणं, न संचिडं जेहिं जिणधम्मो ॥ ५४ ॥

शब्दार्थः-जेमणे पापरूप प्रमादना वश्यथी जिनधर्म नथी सेव्यो ते रांक पुरुषो मरण प्राप्त थये छते शोक करे छे. ५४

धी धी धी संसारं, देवो मरिऊण जं तिरी होइ ॥
मरिऊण रायराया, परिपच्चइ निरयजालाए ॥ ५५ ॥

शब्दार्थः--आ संसारनेज धिक्कार छे! धिक्कार छे!! धिक्कार छे!!! कारणके, देवता मरीने तिर्यंच थाय छे अने चक्रवर्त्ती मरीने नरकनी ज्वालामां पचाय छे. ॥ ५५ ॥

जाइ अणाहो जीवो, दुमस्स पुप्फंव कम्मवायहओ ॥
धनधन्नाहरणाइं, घरसयणकुडुंब मिल्हेवि ॥ ५६ ॥

शब्दार्थः--अनाथ जीव धन, धान्य, आभरण, घर, स्वजन अने कुटुंबने तजीने कर्मरूप वायुथी हणायो छतो वृक्षनां पुष्पनी पेठे नीचे पडे छे. (नीची गति पामे छे.) ॥ ५६ ॥

वसिअं गिरीसु वसिअं, दरीसु वसिअं समुद्दमज्झंमि ॥
रुक्खग्गेसु अ वसिअं, संसारे संसरंताणं ॥ ५७ ॥

शब्दार्थः-हे आत्मन्! संसारने विषे भमता एवा तें पर्वतो उपर, गुफामां, समुद्रमां अने वृक्षोनां अग्रभागने विषे निवास कर्यो छे.

देवो नेरइओ त्ति य, कीड पयंगु त्ति माणुसो एसो ॥
रूवस्सी य विरूवो, सुहभागी दुक्खभागी य ॥ ५८ ॥

शब्दार्थः-हे जीव! तुं केटलीक वखत देवता, नारकी, कीडो पतंग अने मनुष्य थयो छे. वळी तेनो तेज तुं केटलीक वखत रूपवंत, कुरूपवंत, सुखी अने दुःखी थयो छे. ॥५८॥

राइत्ति य दमगुत्ति य, एस सपागुत्ति एस वेअविऊ ॥
सामी दासो पुज्जो, खलुत्ति अधणो धणवइ त्ति ॥५९॥

शब्दार्थः--एज तुं केटली वखत राजा, भीखारी, चंमाल, ब्राह्मण, स्वामी, दास, पूज्य, खल, निर्धन अने धनवंत थयो छे.

नविअत्थिकोइनियमो,सकम्मविणिविठसरिसकय चिठो

अन्नुन्नरूववेसो, नडुव परिअत्तए जीवो ॥ ६० ॥

शब्दार्थः--ए पूर्वे कहेलामां कोइ जातनो नियम नथी. कारणके, पोते पोतानां कर्मनी रचना प्रमाणे चेष्टा करनारो जीव नटनी पेठे जूदां जूदां रूप लइने फरया छे. ॥ ६० ॥

नरएसु वेयणाउ, अणोवमाउ असायवहुलाउ ॥

रे जीव तए पत्ता, अणंतखुत्तो वहुविहाउ ॥ ६१ ॥

शब्दार्थः--अरे जीव ! तें नरकमां उपमा रहित अने अशाता वेदनावाली बहु प्रकारनी वेदनाउ अनंतीवार प्राप्त करी छे.

देवत्ते मणुअत्ते, पराभिउगत्तणं उवगएणं ॥

भीसणदुहं वहुविहं अणंतखुत्तो समणुभूअं ॥ ६२ ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! तें देवपणामां, मनुष्यपणामां परतंत्र पणानें पामवाथी बहु प्रकारनुं जयंकर डुख अनंतीवार अनुजव्युं छे.

तिरिअगइं अणुपत्तो, भीमममहावेअणा अणेगविहा॥

जम्मणमरणरहट्टे, अणंतखुत्तो परिब्भमिउ ॥ ६३ ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! तीर्यंच गतिने पामेलो तुं अनेक प्रकारनो नयंकर वेदनावाळा जन्म मरण रूप रेंहेंटमां अनंतीवार जम्योतुं.

जावंति केवि दुक्खा, सारीरा माणसा व संसारे॥

पत्तो अणंतखुत्तो, जीवो संसारकंतारे ॥ ६४ ॥

शब्दार्थः--संसारमां शरीरसंबंधी अने मनसंबंधी जेटलां कोइ डुखो छे ते सर्वे आ संसाररूप अरण्यमां जमता एवा जीवे अनंतीवार पाम्यो छे ॥ ६४ ॥

तराहा अणंतखुत्तो, संसारे तारिसी तुमं आसी ॥
जं पसमेउं सव्वो-दहीणमुदयं न तीरिज्जा ॥ ६५ ॥

शब्दार्थः—हे जीव! तने तेवा प्रकारनी (तृष्णा) तृष्णा संसारने विषे अनंतीवार थइ छे के, जे तृष्णाने शमाववा माटे सर्वे समुद्रोनुं पाणी पण समर्थ न थाय. ॥ ६५ ॥

आसी अणंतखुत्तो, संसारे ते छुहावि तारिसीआ ॥
जं पसमेउं सव्वो, पुग्गलकाउवि न तरिज्जा ॥६६॥

शब्दार्थः—हे जीव! वली तने संसारमां तेवी क्षुधा अनंतीवार उत्पन्न थइ छे के, जे क्षुधाने शमाववाने घृतादि पुद्गल समूहो पण समर्थ न थाय ॥ ६६ ॥

काऊण मणेगाइं, जम्मणमरणपरिअट्टणसयाइं ॥
दुक्खेण माणुसत्तं, जइ लहइ जहिच्छिअं जीवो॥६७॥

शब्दार्थः—ज्यारे जीव अनेक एवा जन्म मरणना सैंकडो परावर्तन करीने दुःखथी मनुष्यभव पामे त्यारे ते इच्छित सुख पामे छे.

तं तह दुल्लहलंभं, विज्जुलयाचंचलं च माणुअत्तं ॥
धम्मंमि जो विसीअइ, सो काउरिसो न सप्पुरिसो॥६८

शब्दार्थः—जे पुरुष दश दृष्टांतथी दुर्लभ अने विजलीना जेवा चंचल एवा ते मनुष्य भवने पामीने धर्मने विषे खेद पामे छे, ते कायर पुरुष जाणवो पण सत्पुरुष न जाणवो. ॥ ६८ ॥

(उक्तानि सूक्तम.)

माणुस्सजम्मे तडि लद्धयंमि, जिणिंदधम्मो न कओअ जेण ॥
तुट्टे गुणे जह धाणुक्कएणं, हत्था मलेव्वाय अवस्स तेणं ॥

शब्दार्थः—जेणे मनुष्यजन्मरूप संसारमां [illegible] करी जेणे [illegible] मनुष्यनी दोरी [illegible]

त्रुटी जवाथी धनुष्यधारी पुरुषने हाथ घसवा पके छे तेम अव-श्य हाथ घसवा पके छे. ॥ ६ए ॥

रेजीव निसुणि चंचलसहाव, मिल्हेविणु सयलवि बझजाव
नवजेअपरिग्गहविविहजाल, संसारि अत्थि सहुइंदआल

शब्दार्थः–अरे जीव! सांजल. तुं चंचल स्वजाववाला आ सर्व बाह्य जावोने अने नव जेदवाला परिग्रहना विविध समूह ने मूकीने परलोकमां जइश, माटे संसारमां शरीरादि जे कांइ देखाय ते सर्व इंडजाल समान छे. ॥ ७० ॥

पियपुत्तमित्तघरघरणिजाय,
इहलोइअ सव नियसुहसुहावे ॥
नवि अत्थि कोइ तुह सरणि मुक्ख,
इक्कलु सहसि तिरिनिरयदुक्ख ॥ ७१ ॥

शब्दार्थः–हे मूर्ख! आ लोक संबंधी सर्व पिता, माता, पुत्र, मित्र, घर अने स्त्री विगेरेनो समूह पोतपोताने सुख करवाना स्वजाववा-लो छे; परंतु तिर्यंच अने नरकनां दुःखने तो तुं एकलोज सहन करीश. ते वखते तेमांनुं कोइ त्हारे शरण करवा योग्य नथी. ७१

(मागधिकावृत्तम्)

कुसग्गे जह उसबिंदुए, थोवं चिठइ लंबमाणए ॥
एवं मणुआण जीविअं, समयं गोअम मा पमायए७२

शब्दार्थः–जेम दर्जना अग्रजाग उपर रहेलुं पाणीनुं बिंदु थोमो वखत रहेछे, तेम मनुष्यनुं जीवीत पण थोमा वखतनुं छे, माटे हे गौतम ! एक समय पण प्रमादी थइश नहि. ॥ ७२ ॥

संबुज्झह किं न बुज्झह, संबोही खलु पिच्च डुल्लहा ॥
नो हू उवणमंति राईउ, नो सुलहं पुणरवि जीवियं

शब्दार्थः—हे भव्यजीवो ! बोध पामो. शा माटे बोध पामता नथी? मृत्यु पाम्या पछी परभवमां बोधि दुर्लभ छे. गयेलां रात्री दिवस पाछा आवतां नथी. तेमज जीवित पण फरी मलवुं सुलभ नथी. ॥ ७३ ॥

डहरा बुड्ढा अ पासह, गब्भत्थावि चयंति माणवा ॥
सेणे जह वट्टयं हरे, एवं आउखयंमि तुट्टइ ॥७४॥

शब्दार्थः-बालक, वृद्ध अने गर्भमां रहेला माणसो मृत्यु पामे छे, तेने तुं जो. वली जेम सिंचाणो तेतरने मारे छे तेम आयुष्यनो क्षय थये जीवित त्रुटी जाय छे. ॥ ७४ ॥

(आर्यावृत्तम्.)

तिहुअणजणं मरंतं, दट्ठूण नयंति जे न अप्पाणं ॥
विरमंति न पावाउ, धिधि धिठत्तणं ताणं ॥ ७५ ॥

शब्दार्थः-जे पुरुषो मृत्यु पामता एवा त्रण भुवनना माणसोने जोता छता पोताना आत्माने धर्मने विषे स्थापन करता नथी अने पापथी निवर्त्तता नथी, तेओनां धिठपणाने धिक्कार छे! धिक्कार छे!!

मा मा जंपह बहुअं, जे बद्धा चिक्कणेहिं कम्मेहिं ॥
सव्वेसिं तेसिं जायइ, हिओवएसो महादोसो ॥ ७६ ॥

शब्दार्थः-(अयोग्य शिष्योने उपदेश करता गुरुने जोइ योग्य शिष्य गुरुने कहे छे के,) "हे गुरो! जे पुरुषो पोतानां चिकणां कर्मथी बंधायला छे, तेमने बहु उपदेश न करो, कारणके ते अयोग्य शिष्योने हितोपदेश महा दोषवालो थाय छे. ॥७६॥

कुणसि ममत्तं धणसयण-विहवपमुहेसु अणंतदुक्खेसु ॥
सिढिलेसि आयरं पुण, अणंतसुक्खंमि मुक्खंमि ॥७७॥

शब्दार्थः-हे आत्मन् ! तुं अनंत दुःखनां कारण एवा धन

स्वजन अने लक्ष्मी विगेरेमां ममता करे छे अने वली अनंत सुखवाला मोक्षने विषे आदरने शिथिल करे छे. ॥ ७७ ॥

संसारो दुहहेऊ, दुक्खफलो दुस्सहदुक्खरूवो अ ॥
न चयंति तंपि जीवा, अइबद्धा नेहनिअलेहिं ॥७८॥

शब्दार्थः–हे जीव ! आ संसार दुःखनुं कारण, दुःख छे फल जेनुं एवो अने दुःसह दुःखरूपज छे. स्नेहरूप बेडीथी बंधायला जीवो ते संसारने पण त्यजी देता नथी. ॥ ७८ ॥

निअकम्मपवणचलिअ, जीवो संसारकाणणे घोरे ॥
का का विडंबणाउ, न पावए दुसहदुक्खाउ ॥ ७९ ॥

शब्दार्थः-आ घोर संसाररूप अरण्यमां पोतानां कर्मरूप पवनथी चंचल एवो जीव! जेनाथी दुःसह दुःख उत्पन्न थाय छे एवी कइ कइ वध बंधनादि विटंबना नथी पाम्यो ? अर्थात् सर्व पाम्यो छे.

सिसिरंमि सीअलानिल-लहरिसहस्सेहिं भिन्नघणदेहो
तिरिअत्तणंमिऽरन्ने, अणंतसो निहणमणुपत्तो ॥८०॥

शब्दार्थः-हे जीव ! तुं तिर्यंच भवमां अरण्यने विषे शियालामां शितल पवननी हजारो लेहेरोथी भेदायेला दृढ देहवालो थइने अनंतीवार मृत्यु पाम्यो छे ॥ ८० ॥

गिम्हायवसंतत्तो, रन्ने छुहिओ पिवासिओ वहुसो ॥
संपत्तो तिरिअभवे, मरणदुहं बहु विसूरंतो ॥८१॥

शब्दार्थः–हे जीव ! तुं तिर्यंच भवमां अरण्यने विषे उनालाना तापथी तप्त थयो छतो बहुवार भूख्यो तथा तरस्यो थइने बहु खेद पामतो मृत्यु पाम्यो छे ॥ ८१ ॥

वासासुऽरन्नमज्झे, गिरिनिज्झरणोदगेहिं वज्झंतो ॥
सीआनिलडज्झविओ, मओसि तिरिअत्तणे बहुसो ॥८

शब्दार्थः--हे जीव ! तुं तिर्यंच भवमां चोमासाने विषे
वनमां पर्वतोनां झरणानां पाणीथी खेंचाइने शितल पवनथी
दग्ध थयो हतो बहुवार मृत्यु पाम्यो छे. ॥ ८२ ॥

एवं तिरिअभवेसु, कीसंतो दुक्खसयसहस्सेहिं ॥
वसिओ अणंतखुत्तो, जीवो भीसण भवारन्ने ॥८३॥

शब्दार्थ--ए प्रमाणे तिर्यंच भवमां सेंकडो दुःखोथी क्लेश
पामतो जीव भयंकर संसाररूप अरण्यमां अनंतीवार वस्यो छे.

दुट्ठकम्मपलया-निलपेरिओ भीसणंमि भवरन्ने ॥
हिंडन्तो नरएसुवि, अणंतसो जीव पत्तोसि ॥ ८४ ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! दुष्ट एवां आठ कर्मरूप प्रलयकालना प-
वनथी प्रेरायेलो तुं भयंकर संसाररूप अरण्यमां चालतो हतो
नरकने विषे पण अनंतीवार दुःख पाम्यो छे. ॥ ८४

सत्तसु नरयमहीसु, वज्जानलदाहसीअविअणासु ॥
वसिओ अणंतखुत्तो, विलवंतो करुणसद्देहिं ॥ ८५ ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! वज्राग्निनो दाह छे जेमां तथा अत्यंत
शीत वेदना छे जेमां एवी सात नरक पृथ्वीमां तुं करुण शब्द-
थी विलाप करतो छतो अनंतीवार वस्यो छे, ॥ ८५ ॥

पियमायसयणरहिओ, दुरंतवाहिहिं पीडिओ बहुसो ॥
मणुअभवे निस्सारे, विलाविओ किं न तं सरसि ॥ ८६ ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! आ सार रहित मनुष्यभवमां पिता
माता अने स्वजनथी रहित अने महा व्याधियी बहुवार पीडा पा-
मीने बहु विलाप कर्यो ते मनुष्य भवने शुं नथी संभारतो?

[illegible] अलक्खिओ भमइ भववणे जीवो ॥
[illegible], धणसयणसंघाए ॥८७॥

शब्दार्थः--जीव आ संसाररूप वनमां ठेकाणे ठेकाणे धन स्वजनना समूहने त्यजी दइ आकाशमां पवननी पेठे अदृश्य थयो छतो भ्रमे छे. ॥ ८७ ॥

विद्धिजंता असयं, जम्मजरामरणतिरककुंतेहिं ॥
दुहमणुहवंति घोरं संसारे संसरंत जीआ ॥८८॥
तहवि खणंपि कयावि हु, अन्नाणभुयंगमंकिआ जीवा
संसारचारगाओ, नयओ, विज्जंति मूढमणा ॥ ८९ ॥

शब्दार्थः--संसारमां भ्रमता एवा जीवो जन्म, जरा अने मरणरूप तीक्ष्ण भालाथी निरंतर विंधाया छता घोर दुःखने अनुभवे छे तो पण मूढ मनवाला अने अज्ञानरूप भुजंगथी डसायला जीवो क्यारे पण निश्चे संसाररूप बंधीखानामांथी क्षणमात्र उद्वेग पामता नथी. ॥ ८८-८९ ॥

कीलसि किअंतवेलं, सरीरवावीइ जत्र पइसमयं ॥
कालरहटघमीहिं, सोसिज्जइ जीविअंभोहं ॥ ९० ॥

शब्दार्थः--हे जीव ! तुं शरीररूपी वाव्यने विषे केटली वखत सुधी क्रीडा करीश ? के, जे वाव्यमां समये समये कालरूप रहेंटनी घडीयोथी जीवितरूप पाणीनो प्रवाह सूकाइ जाय छे.

रे जीव बुज्झ मा मुज्झ, मा पमायं करेसि रे पाव ॥
किं परलोए गुरुदुक्ख-भायणं होहिसि अयाण ॥९१॥

शब्दार्थः--अरे जीव ! तुं बोध पाम. मोह न पाम. अरे पाप ! तुं धर्ममां प्रमाद न कर अरे अज्ञान ! तुं परलोकमां महा दुःखनो पात्र केम थाय छे? ॥ ९१ ॥

बुज्झसु रे जीव तुमं, मा मुज्झसु जिणमयंमि नाऊणं ॥
जह्मा पुणरवि एसा, सामग्गी दुल्लहा जीव ॥ ९२

शब्दार्थः--अरे जीव! तुं बोध पाम अने धर्मस्वरूप जाणीने जिनमतमां मोह न पाम. अरे जीव! कारणके, फरीथी आ सामग्री मलवी दुर्लभ छे. ॥ ९२ ॥

दुलहो पुण जिणधम्मो, तुमं पमायायरो सुहेसी य ॥
दुसहं च नरयदुक्खं, कह होहिसि तं न याणामो ९३

शब्दार्थः--जिनधर्म फरीथी मलवो दुर्लभ छे. तेम तुं प्रमादनी खाण अने सुखनी इच्छा करनारो छे. वली नरक दुःख दुःसह छे, माटे हुं नथी जाणतो के, परलोकमां तुं केम थइश अर्थात् त्हारी शी गति थशे ? ॥ ९३ ॥

अथिरेण थिरो समले-ण, निम्मलो परवसेण साहीणो॥
देहेण जइ विढप्पइ, धम्मो ता किं न पजत्तं ॥९४॥

शब्दार्थः--जो अस्थिर, मलिन अने परस्वाधिन एवा देहथी स्थिर, निर्मल अने स्वाधिन एवो धर्म मेलवी शकाय तो पछी शुं आम करवुं न कहेवाय ? ॥ ९४ ॥

जह चिंतामणिरयणं, सुलहं न हु होइ तुच्छविहवाणं
गुणविहवविज्जयाणं, जियाण तह धम्मरयणंपि ९५

शब्दार्थः--अल्प पुण्यवालाने जेम चिंतामणि रत्न सुलभ न होय तेम गुणविभव रहित जीवोने धर्मरत्न पण सुलभ न होय.

जह दिठीसंजोगो, न होइ जम्मंधयाण जीवाणं ॥
तह जिणमयसंजोगो, न होइ मिच्छंधजीवाणं ॥९६॥

शब्दार्थः जेम जन्मांध जीवोने आंखोथी देखवुं थवुं नथी तेम मिथ्यात्वथी आंधला जीवोने जिनमतनो संयोग थतो नथी.

पच्चक्खमणंतगुणो, जिणिंदधम्मो न दोससंमावि ॥
तहवि हु अन्नाणंधा, न रमंति कयावि तंमि जियाण

शब्दार्थः-प्रत्यक्ष एवा अनंतगुणवाला जिनराजना धर्मने विषे दोषनो लेश मात्र नथी. तो पण अज्ञानथी आंधला जीवो निश्चे ते धर्मने विषे क्यारे पण रमता नथी. ॥ ९७ ॥

मिच्छे अणंतदोसा, पयडा दीसंति नवि य गुणलेसो ॥
तहवि य तं चेव जिया, हा मोहंधा निसेवंति ॥ ९८ ॥

शब्दार्थ—मिथ्यात्वथी प्रगट अनंत दोषो देखायछे अने गुणलेश देखातो नथी. तोपण मोहथी आंधला जीवो ते मिथ्यात्वनेज सेवे छे. ए घणुं आश्चर्य छे. ॥ ९८ ॥

धि द्धी ताण नराणं, विन्नाणे तह गुणेसु कुसलत्तं ॥
सुहसच्चधम्मरयणे, सुपरिक्खं जे न जाणंति ॥ ९९ ॥

शब्दार्थः-सुखरूप अने सत्यरूप धर्मरत्नने विषे जे पुरुषो उत्तम परीक्षा नथी जाणता. ते पुरुषोना विज्ञानने विषे अने गुणने विषे कुशलपणाने धिक्कार थाओ ! धिक्कार थाओ !! ॥ ९९ ॥

(अनुष्टुप्वृत्तम्)

जिणधम्मोऽयं जीवाणं, अप्पुवो कप्पपायवो ॥
सग्गापवग्गसुक्खाणं, फलाणं दायगो इमो ॥ १०० ॥

शब्दार्थः—आ जिनधर्म जीवोने अपूर्व कल्पवृक्ष छे, तेथी ए कल्पवृक्ष स्वर्ग अने मोक्षनां सुखरूप फलोनो आपनार छे. १००

धम्मो बंधु सुमित्तो अ, धम्मो अ परमो गुरु ॥
मुक्खमग्ग पयट्टाणं, धम्मो परमसंदणो ॥ १०१

शब्दार्थः-धर्म एज बंधु अने उत्तम मित्र छे. वली धर्म उत्तम गुरु छे तेमज धर्म मोक्ष मार्गमां प्रवृत्तेलाने उत्कृष्ट रथ समान छे. ॥१०१ ॥ (आर्यावृत्तम.)

चउगइणंतदुहानल-पलित्तभवकाणणे महाभीमे ॥

सेविसु रे जीव तुमं, जिणवयणं अमियकुंडसमं ॥१०२॥

शब्दार्थः--अरे जीव ! महा भयंकर अने चार गतिना अनंत दुःखरूप अग्निथी सळगता संसाररूप वनमां अमृतनां कुंड समान जिनराजनां वचनने सेवन करय. ॥१०२॥

विसमे भवमरुदेसे, अणंत दुह गिम्हतावसंतत्ते ॥
जिणधम्मकप्परुक्खं, सरसु तुमं जीव सिवसुहदं ॥१०३॥

शब्दार्थः--हे जीव ! तुं विषम अने अनंतां दुःखरूप उनाळाना तापथी तप्त एवा मरुदेशमां मोक्षतुल्य आपनारा जिनधर्मरूप कल्पवृक्षनुं सेवन कर. ॥ १०३ ॥

किं बहुणा जिण धम्मे, जइअव्वं जह भवोदहिं घोरं ॥
लहुतरियमणंतसुहं, लहइ जिअ सासयं ठाणं १०४

शब्दार्थ-हे आत्मन् ! बहु कहेवाथी शुं ? परंतु त्हारे जिन धर्मने विषे ते प्रकारे यत्न करवो के, जेथी जीव भयानक एवा संसाररूप समुद्रने कट तरीने अनंत सुखवाळा मोक्षस्थानने पामे,

॥ इति वैराग्यशतक समाप्तम् ॥

॥ अथ अभव्य कुलकम् ॥

जह अभविय जीवेहिं, नफासिया एवमाइया भावा ॥
इंदत्तमणुत्तरसुर, सिलायनर नारयत्तं च ॥ १ ॥

शब्दार्थः-अभव्य जीवो ए आगळ कहेवामां आवशे ते भावो स्पर्श्या नथी. ते इंद्रपणुं, अनुत्तरवासी देवपणुं, त्रेसठ शलाका पुरुषपणुं अने नव नारदपणुं ॥ १ ॥

केवलिजिणगणहरहत्थे, पव्वज्जा निव्वच्छरं दाणं ॥
पवयणसुरी सुरत्तं, लोगंतिय देवसामित्तं ॥ २ ॥

शब्दार्थ-वळी केवळी तथा गणधरना हाथे दीक्षा, ती-

थंकरनुं वार्षिक दान, प्रवचननी अधिष्टायक देवी तथा देवप-
णुं, लोकांतिक देवपणुं अने देवपतिपणुं न पामे ॥ २ ॥

तायत्तीससुरत्तं, परमाहम्मिय जुयलमणुअत्तं ॥
संभिन्नसोयं तह, पुव्वधराहारयपुलायत्तं ॥ ३ ॥

शब्दार्थः—त्रायस्त्रिंशकदेवपणुं, पंदर जातिना परमाधामि-
पणुं, युगलिया मनुष्यपणुं, वली सभिन्न श्रोत लब्धि, पूर्वधरल-
ब्धि, आहारकलब्धि अने पुलाकलब्धिपणुं पण न पामे ॥३॥

मणनाणाई सुलद्धि, सुपत्तदाणं समाहिमरणत्तं ॥
चारणदुगमहुसिप्पय, खीरासव खीरठाणत्तं ॥ ४ ॥

शब्दार्थः—मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञाननी लब्धि, सुपात्रदान,
समाधि मरण; विद्याचारण अने जंघाचारणनी लब्धि, मधुसर्पि
लब्धि, क्षिराश्रव लब्धि क्षिर स्थानकी लब्धि पण न पामे ॥४॥

तित्थयर तित्थपडिमा, तणुपरिभोगाइ कारणेवि पुणो ॥
पुढवाइय भावंमि वि, अभवजीवेहिं नो पत्तं ॥ ५ ॥

शब्दार्थः—तीर्थंकर तथा तीर्थंकरनी प्रतिमा, वली शरीरना
परिभोगादि कारणमां न पामे. तेमज अभव्य जीवो पृथ्वीकाय
ना भावोने विषे पण न प्राप्त थाय ॥ ५ ॥

चउदसरयणत्तंपि, पत्तं न पुणो विमाणसामित्तं ॥
सम्मत्तनाणसंयम, तवाइ भावा न भावदुगे ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—चौद रत्नपणुं अने वली विमाननुं स्वामीपणुं न
पामे. वली सम्यक्त, ज्ञान, दर्शन, चारित्र, अने तपादि बाह्यान्यंतर
ए बे भाव पण न पामे ॥ ६ ॥

अणुभवजुत्ता भत्ती, जिणाणसाहम्मियाण वच्छलं ॥
न य साहेइ अभवो, संविगत्तं न सुप्पखं ॥ ७ ॥

शब्दार्थः--अभव्य जीव अनुभव युक्त भक्ति, जिनेश्वरनी आज्ञा प्रमाणे साधर्मिनी सेवा भक्ति, संसारथी वैराग्यपणुं ते-मज उत्तम पक्ष न पामे. ॥ ७ ॥

जिणजणयजणणिजाया, जिणजक्खाजक्खणी जुगपहाणा।
आयरियपयाइदसगं, परमठगुणाहमप्पत्तं ॥ ८ ॥

शब्दार्थ-जिनेश्वरना माता, पिता, स्त्री, जक्ष, जक्षणी अ-न युगप्रधान पण न थाय. वली आचार्यादि दश पदनो विनय तेमज परमार्थथी अधिकपणुं न पामे. ॥ ८ ॥

अणुबंधहेउसरूवा, तठ अहिंसा तिहा जिणुद्दिठा ॥
दव्वेण य भावेण य, दुहावि तेसिं न संपत्ता ॥ ९ ॥

शब्दार्थ--वली अभव्य जीव अनुबंध, हेतु अने स्वरूप एवी त्रण प्रकारे श्री जिनेश्वरे कहेली अहिंसा द्रव्य अने भाव ए बे भेदथी न पामे ॥ ९ ॥

॥ इति अभव्यकुलम् ॥

॥ अथ पुण्यकुलकम् ॥

संपुन्नइंदियत्तं, माणुसत्तं च आयरियखित्तं ॥
जाइकुलजिणधम्मो, लब्भंति पभूयपुन्नेहिं ॥ १ ॥

शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी पांच इंद्रियनुं अखंडितपणुं, मनुष्यपणुं, आर्यक्षेत्र, जाति, कुल अने जिनधर्म प्राप्त थाय छे.

जिणचलणकमलसेवा, सुगुरुपायपज्जुवासणं चेव ॥
सज्झाय वायवग्गं, लब्भंति पभूयपुन्नेहिं ॥ २ ॥

शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी जिनराजनां चरणकमलनी सेवा, सुगुरुनां चरणनी सेवा, वांचनादि पांच प्रकारनो स-

काय अने मार्ग वादने जीतवापणुं प्राप्त थाय छे. ॥ २ ॥
सुद्धो बुहो सुगुरुहिं, संगमो उवसमं दयालुत्तं ॥
दाखिन्नं करुणंजो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ३ ॥
शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी शुरू बोधी बीजनुं पामवुं,सुगुरु साथे समागम, शांतपणुं, दाक्षिण्यपणुं अने करुणा प्राप्त थायछे.
समत्तं निच्चलंतं, वणाय परिपालणंअमायत्तं ॥
पढणं गुणणं विणउं, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ४ ॥
शब्दार्थ--घणां पुण्यना उदयथी निश्चल समकीत, वचननुं पालवुं, कपट रहितपणुं, भणवुं, गणवुं अने गुरुविगेरेनो विनय करवो विगेरे प्राप्त थाय छे. ॥ ४ ॥
उस्सगो उववाय, निच्छह विवहारंमि निउणत्तं ॥
मणवयणकायसुद्धी, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ५ ॥
शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी उत्सर्ग, अपवाद, निश्चय अने व्यवहारमां निपुणपणुं. वळी मन, वचन अने कायानो शुद्धि प्राप्त थाय छे. ॥ ५ ॥
अवियारं तारुन्नं, जिणाणं राउ परोवियारत्तं ॥
निक्कंपयायझाणे, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ६ ॥
शब्दार्थ–घणां पुण्यना उदयथी अविकारी युवावस्था,जिन आज्ञामां राग, परोपकारपणुं,धर्मध्यानमां निश्चळपणुं प्राप्त थाय छे,
परनिंदापरिहारो, अप्पसंसा अत्तणो गुणाणं च ॥
संवेगो निवेगो, लप्नंति पन्नूयपुन्नेहिं ॥ ७ ॥
शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी परनिंदानो त्याग, पोतानी अप्रशंसा अने पोताना गुणना अवगाण, संसारथी वैराग्य अने

संसारथी निकलवानो इच्छा प्राप्त थाय छे. ॥ ७ ॥

निम्मलसीलाब्भासो, दाणुल्लासो विवेग संवासो ॥
चउगइदुहसंत्तासो, लब्भंति पभूयपुन्नेहिं ॥ ८ ॥

शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी निर्मल शीलनुं पालवुं, दान आपवामां उल्लास, हिताहितना विवेकनुं समीपपणुं अने चार गतिनां दुःखना त्रासनुं जाणपणुं होय छे. ॥ ८ ॥

दुक्कडगरिहा सुकडा-णुमोयणं पायछित तवचरणं ॥
सुहझाण नमुक्कारो, लब्भंति पभूयपुन्नेहिं ॥ ९ ॥

शब्दार्थः-घणां पुण्यना उदयथी माठां कृत्यनी निंदा, सारां कृत्यनी अनुमोदना, खोटा कृत्यनुं प्रायश्चित्त लेवुं, तप करवुं, शुभ ध्यान करवुं अने नमस्कार करवो. ए सर्व प्राप्त थाय छे.

इयगुणमणिभंडारो, सामग्गी पाविऊण जेण कउ ॥
छिन्नमोहपासा, लहंति ते सासयसुक्खं ॥ १० ॥

शब्दार्थः--आ उपर कहेला गुणरूप मणिना भंडाररूप सामग्री पामीने जेणे ते प्रमाणे आचरण कर्युं छे ते, मोहना पासने तोडी नाखी शाश्वतां सुखने पामे छे.॥१०॥ इति पुण्यकुलकम् ॥

॥ अथ पुण्यपाप कुलकम् ॥

छत्तीसदिणसहस्सा, वाससये होइ आउपरिमाणं ॥
जिणंतं पडिसमयं, पिच्छंत धम्मंमि जइअव्वं ॥ १ ॥

शब्दार्थः-सो वर्षना छत्रीस हजार दिवस, आयुष्यनुं एटलुं परिमाण होय छे. ते समये समये ओछुं थतुं जाय छे, एम जाणीने धर्ममां यत्न करवो. ॥ १ ॥

जइ पोसहसहिआणं, तवनियमगुणेहिं गच्छइ एकदिणं ॥
ता बंधइ देवाउं, इत्तियमित्ताइं पलिआइं ॥ २ ॥

शब्दार्थः-जो कोइ जीव पोषह सहित तप नियमना गुणो थी एक दिवस गमावे तो ते आगल कहेशे तेटला पल्योपमनुं देवतानुं आयुष्य बांधे छे. ॥ २ ॥

सगवीसं कोमीसया, सतहुत्तरी कोमीलक्क सहस्सा य॥
सत्तसया सतहुतरि, नवन्नागा सतपलियस्स ॥ ३ ॥

शब्दार्थः--सत्तावीस सो क्रोम, सीत्योतेर क्रोम, सीत्योतेर लाख सीत्योतेर हजार, सातसोने सीत्योतेर एटला पल्योपम अने वली एक पल्योपमनो नवमो न्नाग. ॥ ३ ॥

अठासीई सहस्सा, वाससये दुन्नि लक्क पहराणं ॥
एगावि अ जइ पहरो, धम्मजुत्तं ता इमो लाहो ॥ ४ ॥

शब्दार्थः-एकसो वर्षना बे लाख अने अठासी हजार पहोर छे. तेमांथी जो कोइ जीव एक पण पहोर धर्म युक्त (पोसह व्रत युक्त) थाय तो तेने आगल कहेशे एटलो लान्न थायछे ।४।

तिसयसगंचत्तकोमि, लक्का बावीस सहस बावीसा ॥
दुसय दुवीस दुन्नागा, सुराउबंधो य इगपहरे ॥ ५ ॥

शब्दार्थः-त्रणसो सुम्तालीस क्रोम, बावीस लाख, बावीस हजार, बसो अने बावीस, पल्योपम अने वली उपर एक पल्योपमना बे न्नाग. वर्षमां एक पहोर पोसह करनारने देवतानां आयुष्यनो एटलो बंध थायछे. ॥ ५ ॥

दस लक्क असीय सहसा, महुत्त संखाय होइ वाससए ॥
जइ सामाइअसहिउं, एगोवि अता इमो लाहो ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—सो वर्षनां मुहूर्त (बे घमीयो) दस लाख अने एंसी हजार थाय थायछे. जे जीव ए एक मुहूर्त सामायिक सहित तो तेने आगल

बाणवयकोमीउं, लरका गुणसहि सहस्स पणवीसं ॥
नवसयपणवीस जूआ, सतिहा अमन्नाग पलियस्स ७

शब्दार्थः--बाणुं क्रोम,ओगणसाठ लाख,पच्चीस हजार नवसो प-
च्चीस पल्योपम अने उपर एक पल्योपमना आठीय। सात न्नाग; ए
टलुं देवगतिनुं आयुष्य चघमी सामायक करनार जीव बांधे छे.

बासस्सये घमिआणं, लरिकगवीसं सहस्स तह सठी ॥
एगावि अ धम्मजुआ, जइ ता लाहो इमो होइ ॥ ८ ॥

शब्दार्थः--एक वर्षनी घमीयो एकवीश लाख अने साठ ह
जार थाय, तेमांथी एक घमी पण जो जीव धर्म युक्त होय तो
तेने आगली गाथामां कहेशे तेटला लाभ थाय छे.॥ ८ ॥

ठायालकोमी गुणती-स लरक अठसठी सहस्स सयनवगं
ते सठी किंचूणा, सुराउ बंधेइ इगघमिए ॥ ९ ॥

शब्दार्थः--एक घमी धर्म करनार जीव छेतालीश क्रोम, उ
गणत्रीस लाख, असठ हजार, नवसो अने कांइक ऊंठा पचा
[illegible] पल्योपमनुं आयुष्य बांधे. ॥ ९ ॥

सठी अहोरत्तेणं; घमीओ जस्स जंति पुरिसस्स ॥
नियमेणावि घमीओ, सो दिअहउं निप्फलो तस्स १०

शब्दार्थः--एक दिवसनी साठना प्रमाणे जे पुरुषनी घमी-
ओ जाय छे, तेमां एक नियमथी पण गदिन जाय ते दिवस तेनो
निष्फल जाणवो. ॥ १० ॥

[illegible] ॥
[illegible] ॥ ११ ॥
[illegible]
[illegible] ॥ ११ ॥
[illegible]

इक्कोवि अ ऊसासो, न य रहिउं होइ पुण्यपावहिं ॥
जइ पुण्णं सहिउ एगोविअ ता इमो लाहो ॥ १२ ॥

शब्दार्थः-तेमांथी एक पण श्वासोश्वास पुण्य पाप रहित होय नहि; परंतु कोइ जीव जो एक श्वासोश्वास पुण्य सहित होय तो तेने आगली गाथामां कहेशे तेटलो लाभ थाय छे. १२

लक्ख ऊग सहस पणचत्तं, चउसया अठ चेव पलियाइं
किंचूणा चउभागा, सुराउ वंधो इगुसासे॥ १३ ॥

शब्दार्थः-बे लाख, पीस्तालीस हजार, चारसो अने आठ पल्योपम वली कांइक ओछा चार भाग. एटलुं देवतानुं आयुष्य एक श्वासोश्वास धर्म करनारो पामे. ॥ १३ ॥

एगुणवीसं लक्खा, तेसठी सहस्स ऊसय सत्तठी ॥
पलियाइं देवाउं, वंधइ नवकार उस्सगो ॥ १४ ॥

शब्दार्थः-ओगणीस लाख, त्रेसठ हजार बसो ने अडसठ. एटला पल्योपमनुं देवायु नवकार गणनारो अथवा आठ श्वासोश्वास धर्म सेवनारो पामे. ॥ १४ ॥

लक्खिगसठी पणती-स सहस ऊसय दसपलिय, देवाउं
वंधई अहियं जीवो, पणवीसुसास उस्सगो ॥ १५ ॥

शब्दार्थः-एकसठ लाख, पांत्रीस हजार, बसो ने दश पल्योपमनुं देवतानुं आयुष्य पचीस श्वासोश्वास अथवा एक लोगस्सनो काउस्सग्ग करनार जीव बांधे. ॥ १५ ॥

पावई पारायाणं, हवेउ निरयाउ अस्स वंधोवि ॥
इअ नाउसिरि जिण कित्ति-अंमि धम्मंमि उयमं कुणह

शब्दार्थः-हे भव्य जीवो ! पाप करनाराने ए प्रमाणे नर

नाणं सुझाणं चरणस्स सोहा, सिसस्स सोहा विणए पविति

शब्दार्थः--उग्र तपवालानी क्षमा शोभावे, उपशमवालानी समाधिजोग शोभा छे, चारित्रनी ज्ञान अने उत्तम ध्यान ए बे शोभा छे अने शिष्यनी विनयमां प्रवृत्ति ए शोभा छे. ॥९॥

अभूसणो सोहइ बंभयारी, अकिंचणो सोहइ दिक्खधारी
बुद्धिजुओ सोहइ रायमंती, लज्जाजुओ सोहइ एगपत्ति १०

शब्दार्थः--आभूषण विना ब्रह्मचारी शोभे छे, परिग्रह रहित दीक्षाधारी शोभे छे; बुद्धिवंत राजमंत्री शोभे छे अने लज्जावंत पुरुष एक स्त्रीथी शोभे छे. ॥ १० ॥

अप्पाअरीहोइअणवठियस्स, अप्पाजसोसीलमओनरस्स
अप्पादुरप्पाअणवठियस्स, अप्पाज अप्पासरणंगईय॥

शब्दार्थः—अशांत माणसने पोतानो आत्मा वैरी छे शीलवंत माणसनो आत्मा जस पासे छे, अशांत माणसनो आत्मा दुरात्मा छे अने आत्माज आत्माने शरण करवा योग्य अने गतिरूप छे.

न धम्मकज्जा परमत्थिकज्जं, नपाणिहिंसा परमं अकज्जं ॥
न पेमरागा परमत्थि बंधो, न बोहिलाभापरमत्थि लाभो १२

शब्दार्थः--धर्म कार्य विना बीजुं उत्तम कार्य नथी, प्राणी हिंसा विना बीजुं अकार्य नथी. प्रेमराग विना बीजो बंध नथी अने बोधिलाभ विना बीजो लाभ नथी. ॥ १२ ॥

नसेविअव्वा पमया परक्का, न सेविअव्वा पुरिसा अविज्जा ॥
नसेविअव्वा अहिमा निहीणा, नसेविअव्वा पिसुणा मणुस्सा ॥

शब्दार्थः--परस्त्री सेववी नहि, मूर्ख पुरुषोने सेववा नहि, [illegible] सेववा नहि अने चाडिया माणसोने सेववा नहि. ॥ १३ ॥

जें धम्मिया ते खलु सेवियवा, जे पंम्फिया ते खलु पुछियवा
जे साहुणो ते अभिवंदियवा, जे निम्ममा ते पम्फिजाणियवा

शब्दार्थः--जे धर्मी माणसो छे ते सेववा योग्य छे, जे पंम्फित पुरुषो छे ते पूछवा योग्य छे, जे साधुर्ड छे ते वांदवा योग्य छे अने जे ममतारहित छे ते पम्फिछाणवा योग्य छे. ॥ १४॥

पुत्ताय सीसाय समं विभत्ता, रिसीय देवाय समं विभत्ता॥
मुक्खा तिरिक्खा यसमं विभत्ता, मुआ दरिद्दाय समंविभत्ता

शब्दार्थः--पुत्र अने शिष्यो सरखा जाणवा, मुनि अने देवता सरखा जाणवा, मूर्ख अने तिर्यंच सरखा जाणवा अने मूवेला तथा दरिद्री सरखा जाणवा. ॥ १५ ॥

सवाकला धम्मकला जिणाइ, सवाकहाधम्मकहाजिणाइ॥
सवंबलं धम्मबलं जिणाइ, सवं सुहं धम्मसुहं जिणाइ १६

शब्दार्थः-सर्वकलाने धर्मकला जीते, सर्व कथाने धर्मकथा जीते, सर्व बलने धर्मबल जीते अने सर्व सुखने धर्म सुख जीते.

जूए पसत्तस्य धणंस्स नासो, मंसं पसत्तस्य दयाइनासो॥
मर्ज पसत्तस्य जसस्सनासो, वेसापसत्तस्य कुलस्स नासो

शब्दार्थः--जुवटामां आसक्त थयेलाना धननो नाश थायछे, मांसमां आसक्त थयेलानी दयादिनो नाश थाय छे मद्यमां आसक्त थयेलाना जसनो नाश थाय छे अने वेश्यामां आसक्त थयेलाना कुलनो नाश थाय छे. ॥ १७ ॥

हिंसापसत्तस्य, सुधम्मनासो, चोरीपसत्तस्य सरीरनासो॥
तहापरत्थिसुपसत्तयस्स, सवस्सनासोअहमा गई य १८

शब्दार्थः-हिंसामां आसक्त थयेलाने सारा धर्मनो नाश थाय छे, चोरीमां आसक्त थयेलाना शरीरनो नाश थाय छे. ते

भज परस्त्रीमां आसक्त थयेला धन शरीरादि सर्वनो नाश अने अधम गति थाय छे. ॥ १८ ॥

दाणं दरिद्दस्सपहुस्स खंती, इच्छानिरोहोइ सुहोइ यस्स॥
तारुणए इंदियनिग्गहो य, चत्तारि एयाणि सुदुक्कराणि १ए

शब्दार्थः-दरिद्रीने दान आपवुं, श्रीमंतना क्षमा राखवी, इच्छाने रोकवी अने युवावस्थामां इंद्रियोने वश्य राखवी. ए चार बहु दुष्कर छे. ॥ १ए ॥

असासयं जीवियमाहु लोए, धम्मं चरे साहु जिणोवइठं
धम्मोयताणं सरणं गई य, धम्मं निसेवितु सुहं लहंति ॥

शब्दार्थः-लोकमां जीवीत अशाश्वतुं कह्युं छे माटे जिनेश्वरे कहेला उत्तम धर्मनुं आचरण करो. धर्म रक्षण कर्ता, शरण करवा योग्य अने सारी गति आपनारो छे. ए धर्मने सेवीने शाश्वतुं सुख पमाय छे ॥ २० ॥

॥ इति श्री गौतम कुलक ॥

॥ अथ दान कुलकम् ॥

परिहरिय रज्जसारो, उप्पाडिय संजमिक्क गुरुभारो ॥
खंधाउ देवदूसं, वियरंतो जयउ वीरजिणो ॥ १ ॥

शब्दार्थः-राज्यना सारने त्यजी देनारा, चारित्ररूप एक मोटा भारने उपाडनारा अने स्कंधथी देवदूष्य वस्त्र विप्रने आपी देनारा श्री महावीर प्रभु जयवंता वर्तो. ॥ १ ॥

धम्मत्थकाममेया, तिविहं दाणं जयंमि विक्खायं ॥
तहवि य जिणिंदमुणिणो, धम्मियदाणं पसंसंति ॥२॥

शब्दार्थः-धर्मदान अर्थदान अने कामदान एवा भेदथी

त्रण प्रकारनुं दान जगत्‌मां विख्यात छे. तो पण जिनेश्वरना मुनियो आहारादिक धार्मिक दानने वखाणे छे ॥ ३ ॥

दाणं सोहग्गकरं, दाणं आरुग्गकारणं परमं ॥
दाणं भोगनिहाणं, दाणं ठाणं गुणगणाणं ॥ ३ ॥

शब्दार्थः—दान सौभाग्य करनार छे दान श्रेष्ठ आरोग्यनुं कारण छे, दान भोगनुं निधान छे अने दान गुणसमूहनुं स्थानक छे.

दाणेण फुरइ कीत्ती, दाणेण य होइ निम्मला कंती ॥
दाणावज्जिय हियउ, वयरीवि हु पाणियं वहइ ॥ ४ ॥

शब्दार्थः—दानथी कीर्ति विस्तार पामेछे, दानथी निर्मल कांति थायछे, दानयुक्त हृदयवाळाउना शत्रुउ पण तेने घेर पाणी भरे छे.

धणसत्त्ववाहजम्मे, जं घयदाणं कयं सुसाहूणं ॥
तक्कारणमुसभजिणो, तेलुक्कपियामहो जाउ ॥ ५ ॥

शब्दार्थः—धन सार्थवाहना भवमां उत्तम साधुउने जे घीनुं दान कर्युं हतुं ते पुण्यना कारणथी रुषभदेव प्रभु त्रण लोकना पितामह (दादा) थया. ॥ ५ ॥

करुणाइ दिन्नदाणं, जम्मंतरं गहियपुन्नकिरियाणं ॥
तिच्छयरचक्करिर्द्धि, संपत्तो संतिनाहोवि ॥ ६ ॥

शब्दार्थः—कृपाथी पारेवाने अभयदान आपी पाछला भव माटे पुण्यरूप करीयाणांने खरीद करनारा शोळमा श्री शांतिनाथ तीर्थंकर अने चक्रवर्तीनी समृद्धीने पाम्या ॥ ६ ॥

पंचसयसाहुभोयण–दाणावज्जियसुपुन्नपप्भारो ॥
अच्छरियचरियभरिउ भरहो भरहाहिवो जाउ ॥७॥

शब्दार्थः—पांचसो साधुने भोजनना दानथी पुण्यनो समूह मेळवनार अने आश्चर्यकारी चरित्रथी भरपूर एवो भरत चक्रवर्त्ती भरतक्षेत्रनो स्वामी थयो. ॥ ७ ॥

सीलं धम्मनिहाणं, सीलं पावाण खंमणं जणियं ॥
सीलं जंतूणजए, अकित्तिमं मंमणं पवरं ॥ ३ ॥

शब्दार्थः--शील धर्मनो जंमार तेमज सील पापोने नाश करनारुं कह्युं छे. वळी जगत्‌मां शील एज माणसोने अकृत्रिम (साचुं) घराणुं छे. ॥ ३ ॥

नरयदुवारनिरुंभण--कवाडसंपुडसहोअरच्छायं ॥
सुरलोअधवलमंदिर--आरुहणे पवरनिस्सेणिं ॥ ४ ॥

शब्दार्थः--शील नरकना रस्ताने रोकवाने कमाडनी जोड सरखुं अने देवलोकरूप उज्वल मंदिरमां चडवाने श्रेष्ठ निसरणी रूप छे. ॥ ४ ॥

सिरि उग्गसेणधूआ, रायमई लहउ सीलवइरेहं ॥
गिरि विवरगउ जीए, रहनेमी गविउ मग्गे ॥ ५ ॥

शब्दार्थः--श्री उग्रसेन राजानीपुत्री राजीमति शीलवंती स्त्रीओमां रेखा पामी छे. कारण के, जेणे पर्वतनी गुफामां रहेला रथनेमिने धर्ममार्गने विषे रोकी राख्या छे. ॥ ५॥

पज्जलिउवि हु जलणो, सीलपभावेण पाणियं हवइ ॥
सा जयउ जए सीआ, जीसे पयडा जसपडाया ॥ ६ ॥

शब्दार्थः--जेना शील प्रभावथी झळहळमान एवो पण अग्नि पाणीरूप थयो. ते सीता जगत्‌मां जयवंती वर्ते छे के जेनी यशपताका प्रगट छे. ॥ ६ ॥

चालणिजलेण चंपा--ए जीइ उग्घाडियं दुवारतियं ॥
कस्स न हरेइ चित्तं, तीयं चरियं सुभद्दाए ॥ ७ ॥

शब्दार्थः--जेणे चालणीनां जल करीने चंपा नगरीना त्रण द्वार बाजा उघाड्या ते सुभद्रानुं चरित्र कोना चित्तने हरनारुं न थाय ?

नंदउ नमयासुंदरि, सा सुचिरं जीइ पालियं सीलं ॥
गहिलत्तणंपि काउं, सहिआ य विडंबणा विविहा ॥८॥

शब्दार्थः--ते नर्मदा सुंदरी आनंद पामो के, जेणे गांडापणुं करीने पण विविध प्रकारनी विटंबना सहन करीने शील पाल्युं ॥ ८ ॥

भद्दं कलावईए, भीसणरन्नंमि रायचत्ताए ॥
जंसा सीलगुणेणं, छिन्नंगं पुण नवा जाया ॥ ए ॥

शब्दार्थः--भयंकर अरण्यमां राजाए त्यजी दीधेली कलावतीनुं कल्याण थाउ के, जेना शीलगुणथी छेदायेला अंगो पण फरी नवा थया. ॥ ए ॥

सीलवईए सीलं, सक्कइ सक्कोवि पन्निउं नेव ॥
रायनिउत्ता सचिवा, चउरोवि पवंचिआ जीए ॥१०॥

शब्दार्थः--शीलवतीना शीलने इंद्र पण वर्णववाने समर्थ नथी. कारणके, जे शीलवंतीये राजाना मोकलावेला चार प्रधानोने पण छेतर्या छे. ॥ १० ॥

सिरिवद्धमाणपहुणा, सुधम्मलाभुत्ति जीई पट्टविउ ॥
सा जयउ जए सुलसा, सारयससि विमलसीलगुणा ११

शब्दार्थः--श्री वर्द्धमान स्वामीये जेने धर्मलाभ मोकल्यो हतो, ते शरद ऋतुना चंद्रसमान निर्मल गुणवाली सुलसा जगतमां जयवंती वर्तो. ॥ ११ ॥

हरिहरबंभपुरंदर-मयभंजणपंचबाणबलदप्पो ॥
लीलाइ जेण दलिओ, स थूलभद्दो दिसउ भद्दं ॥ १२ ॥

शब्दार्थः--हरि, हर, ब्रह्मा, अने इंद्रना मदने भागनार [illegible] कामदेवने जेणे लीलामात्रमां दर्यो [illegible] आपो. ॥ १२ ॥

मणहरतारुणभरे, पत्थिज्जंतोवि तरुणि नियरेणं ॥
सुरगिरिनिच्चलचित्तो, सो वयरमहारिसी जयउ ॥१३॥

शब्दार्थः—जे मनोहर तारुण्यना भारवाली स्त्रीरूप जनसमूहे प्रार्थना कर्या छतां पण मेरुपर्वतनी पेठे निश्चल चित्तवाला रहेला छे, ते श्री वज्रस्वामी जयवंता वर्त्तो ॥१३॥

थुणियं तस्स न सक्का, सड्ढस्स सुदंसणस्स गुणनिवहं॥
जो विसमसंकडेसुवि, पडिओवि अखंडशीलधणो १४

शब्दार्थः—ते सुदर्शन श्रावकनो गुणसमूह स्तुति करवो शक्य नथी. अर्थात् स्तुति करी शकाय तेवो नथी. कारण के, जे विषम शंकटमां पड्या छतां पण अखंड शीलरूपधन वालो रह्योछे.

सुंदरि सुनंद चिल्लण, मणोरमा अंजणा मिगावइ अ
जिणसासणसु पसिध्धा, महासइउ सुहं दिंतु॥ १५ ॥

शब्दार्थः—सुंदरी, सुनंदा, चिल्लणा, मनोरमा, अंजना अने मृगावती. जिनशासनमां प्रसिद्ध एवी ए महा सतीयो(तमने)सुख आपो

अचंकारिय चरिअं, सुणिऊणं को न धुणई किर सीसं
जा अखंडियसीला, भिल्लवइकयछिआवि दढं ॥ १६ ॥

शब्दार्थः—अचंकारी भटानुं चरित्र सांभलीने कोण पोतानुं मस्तक निश्चे न धुणावे ? के, जे भिल्लपतिये कष्ट आप्या छतां दृढ अखंडित शीलवाली रही ॥ १६ ॥

नियमित्तं नियभाया,नियजणउ नियपियामहो वावि ॥
नियपुत्तोवि कुसीलो, न वल्लहो होइ लोआणं ॥१७॥

शब्दार्थ-पोतानो मित्र, पोतानो भाइ, पोतानो बाप अथवा पोतानो बापनो बाप पण, वली पोतानो पुत्र पण जो कुशील होय तो ते लोकोने वहालो थतो नथी. ॥ १७ ॥

देवावि किंकरत्तं, कुणंति कुलजाइविरहिआणंपि ॥
तवमंतपन्नावेणं, हरिकेसबलस्स वरिसिस्स ॥ ८ ॥

शब्दार्थः—देवता पण कुलजाति रहितनुं पण दासपणुं करे छे. जुओ देवताए चंडालना कुलमां जन्मेला हरिकेशी महा मुनिनुं तपरूप मंत्रना प्रभावथी दासपणुं कर्युं छे. ॥ ८ ॥

पम्सयमेगपम्मेणं, एकेण घमेण घम्सहस्साइं ॥
जं किर कुणंति मुणिणो, तवकप्पतरुस्स तं खु फलं ए

शब्दार्थः—मुनियो जे एक वस्त्रवमे हजारो वस्त्र अने एक घमावमे हजारो घमाउना निश्चे करे छे, ते खरेखर तपरूप कल्प वृक्षनुं फल छे. ॥ ए ॥

अनिआणस्स विहिए, तवस्स तवियस्स किं पसंसामो ॥
किज्जइ जेण विणासो, निकाइयाणंपि कम्माणं ॥ १० ॥

शब्दार्थः—नीयाणा रहित विधिवमे करेलां तपने शुं वखाणीये? कारण के, जे तपथी निकाचित एवां पण कर्मनो विनाश कराय छे.

अइदुक्करतवकारी, जगगुरुणा कन्हपुच्छिएण तया ॥
वाहरिओ स महप्पा, समरिज्जउ ढंढणकुमारो ॥ ११ ॥

शब्दार्थः—श्री कृष्णना पुछवा उपरथी ते श्री जगत् गुरु नेमिनाथे "जेने अतिदुष्कर तप करनार छे." एम कह्युं हतुं, ते महात्मा श्री ढंढणकुमारने स्मरण करो. ॥ ११ ॥

पइदियहं सत्तजणे, वहिऊणं गहियवीर जिणदिक्खो ॥
दुक्करतवकरणरओ, अज्जुणओ मालिओ सिद्धो ॥ १२ ॥

शब्दार्थः—दररोज (छ पुरुष अने एक स्त्री) एम सात माणसोने हणीने पछी श्री वीरप्रभु पासे दीक्षा लइ दुष्कर तपश्चर्या करवामां आसक्त थयेलो अर्जुनमाली सिद्ध थया. ॥१२॥

नंदीसररुचगेसुवि, सुरगिरिसिहरेसु एगफालाए ॥
जंघाचारणमुणिणो, गच्छंति तवप्पभावेण ॥ १३ ॥

शब्दार्थः--जंघाचारण मुनियो तपना प्रभावथी एक फाले करीने आठमा नंदीश्वरद्वीपमां, बारमा रुचकद्वीपमां अने मेरुपर्वतना शिखर उपर जाय छे. ॥१३॥

सेणियपुरउ जेसिं, पसंसिअं सामिणा तवोरूवं ॥
ते धन्ना धन्नमुणि, डुन्नवि पंचुत्तरे पत्ता ॥ १४ ॥

शब्दार्थः--श्रेणिक राजानी आगल श्री महावीरप्रभुए जेनुं तपस्वरूप वर्णव्युं छे, ते धनकुमार अने धनाकाकंदी ए बन्ने मुनिउ पण पांचमां अनुत्तर विमानने विषे प्राप्त थया. ॥ १४ ॥

सुणिऊण तव सुंदरी-कुमरीए अंबिलाणि अणवरयं ॥
सठिवाससहस्सा, भण कस्स न कंपए हिययं ॥ १५ ॥

शब्दार्थ-हे भाइ! सुंदरी कुमारीनुं साठ हजार वर्षसुधी निरंतर आंबील तप सांभली कोनुं हृदय न कंपे? कहे !! १५

जं विहिअमंबिलतवं, बारसवरिसाइं सिवकुमारेण ॥
तं दट्ठु जंबुरूवं, विम्हइउ कोणिउ राया ॥ १६ ॥

शब्दार्थः--शिवकुमारे (जंबूस्वामीने पाछले भवे) बारवर्ष पर्यंत जे आंबिल तप कर्यो, तेथी बीजा भवमां जंबूस्वामीना रूपने जोइ कोणिक राजा विस्मय पाम्यो. ॥१६॥

जिणकप्पिय परिहारिय, पडिमापडिवन्न लंदयाईणं ॥
सोऊण तवसरूवं, को अन्नो वहउ तवगव्वं ॥ १७ ॥

शब्दार्थः--जिनकल्पी, परिहारविशुद्धि चारित्रवाला, पडिमाना धारणहार एवा लंदी साधुनां तपस्वरूपने सांभलीने बीजो कयो पुरुष तपना गर्वने धारण करे? ॥ १७ ॥

मासद्धमासखवग, बलभद्दो रूववंपि हु विरतो ॥
सो जयउ रन्नवासी, पडिबोहिअसावयसहस्सो १८

शब्दार्थः—मासखमण अथवा पखखमण करनारा, रूपवंत छतां पण निश्चे विरक्त थयेला, अरण्यमां वसनारा अने सिंहादि हजारो हिंसक पशुओने बोध करनारा ते बलभद्र मुनि जयवंता वर्त्तो.

थरहरियधरं झलहलिय सायरं चलियसयलकुलसेला
जमकासि जयं विण्हु, संघकए तं तवस्स फलं ॥१९॥

शब्दार्थः—पृथ्वी कंपी, समुद्रो खलभल्या, सर्वे हिमवंतादि कुलपर्वतो कंप्या. ए प्रमाणे जयवंता विष्णुकुमारे श्री संघने माटे जे कांइ कर्युं, ते सर्व तपनुं फल छे. ॥ १९ ॥

किं बहुणा भणिएणं, जं कस्सवि कहवि कछवि सुहाइं
दीसंति भवणमज्झे, तत्थ तवो कारणं चेव ॥ २० ॥

शब्दार्थः—बहु कहेवाथी शुं ? कारण के. भुवननी मध्ये जे कांइ कोइने पण क्यांइ सुखादि देखाय छे, त्यां तपनुं कारण निश्चे जाणवुं. अर्थात् तपथी सर्व प्रकारनुं सुख मळे छे. ॥ २० ॥

॥ इति तप कुलक ॥

॥ अथ भावकुलक ॥

कमठासुरेण रइयंमि भीसणे पलयतुल्लजलबोले ॥
[illegible] केवलनाणी, [illegible] जयउ पासजिणो ॥१॥

शब्दार्थः—कमठासुरे रचेला भयंकर प्रलयकाळ समान ज-
[illegible] केवलज्ञान-
[illegible] वर्तो. ॥१॥
[illegible] न होइ जइ [illegible] ॥
[illegible]

तह दाणसीलतवजा-वणाउ अहलाउं जावविणा ॥२॥

शब्दार्थः-जेम चूना विना तांबुल अने पास विना वस्त्र रंग न पामे,तेम जाव विना दान,शील, तप अने जावना अफल जाणवी.

मणिमंततसहीणं, जंतयतंताण देवयाणंपि ॥
जावेण विणा सिद्धि, न हु कस्सइ दीसई लोए ॥३॥

शब्दार्थः-जो रुनां मणि, मंत्र औषधी, जंत्र, तंत्र अने देवतानी उपासनानो पण जाव विना सिद्धि कोइने देखाती नथीज.

सुहजावणावसेणं, पसंदचंदो मुहुत्तमित्तेण ॥
खविऊण कम्मगंठिं, संपत्तो केवलं नाणं ॥ ४ ॥

शब्दार्थः-शुन जावनाना वशपथी प्रसन्न चंडराजा मुहूर्त्त मात्रमां कर्मनी गांठ खपावी केवलज्ञान पाम्यो. ॥ ४ ॥

सुस्सूसंती पाए, गुरुणीणं गरहिऊण नियदोसे ॥
उप्पन्नदिव्वनाणा, मिगावइ जयओ सुहजावा ॥५॥

शब्दार्थ-गुरुणीना पगनी सेवा करतां अने पोतानां दोषनी निंदा करवाथी शुन जावने लीधे उत्पन्न थयेला केवलज्ञानवाली मृगावती जयवंतां वर्त्तो. ॥ ५ ॥

जयवं इलाईपुत्तो, गुरुए वंसंमि जो समारुढो ॥
दठूण मुनिवरिंदे, सुहजावा केवली जाओ ॥ ६ ॥

शब्दार्थः-म्होटा वांस उपर चमेला पूज्य इलाचि पुत्र गे.रीप फरना मुनीश्वरने जोइ शुन जावथी केवली थया.

कविओअ वंभणमुणी, असोगवणिआई मययारंमि ॥
खाडाखोहत्तिपयं, जाणंतो जायजाईसरो ॥ ७ ॥

शब्दार्थः-कपिल नामना ब्राह्मण मुनि अशोकवाडीमां पोताना मनपो (जहा खाटो तहा खोटो, खाटा खोटो पयहूइ॥

शब्दार्थः--जीवना वधने विषे पण समिती तथा गुप्तीवंतने
जे निश्चे बंध नथी कह्यो; तेमां भाव प्रमाण छे; परंतु काय व्या-
पार प्रमाण नथी. ॥ १८ ॥

भाव चिय परमत्थो, भावो धम्मस्स साहओ भणिओ ॥
सम्मत्तस्सवि बीअं, भाव चिय विंति जगगुरुणो ॥१९॥

शब्दार्थः--भाव एज निश्चे परमार्थ छे अने भाव एज धर्म
नो साधक कह्यो छे. तीर्थंकरो सम्यक्त्वनुं बीज भावज कहे छे.

किं बहुणा भणिएणं, तत्तं निसुणेह भो महासत्ता ॥
मुक्खसुहबीयभूओ, जीवाण सुहावहो भावो ॥ २० ॥

शब्दार्थः--बहु कहेवाथी शुं? हे महासत्ववंतो! तत्वनी वात
सांभळो. प्राणीने मोक्षनां सुखनुं बीजभूत सुखकारी भावज छे.

इय दाणसील तव भावणाओ जो कुणइ सत्ति भत्तिपरो ॥
देवनरिंदमहिअं, अचिरा सो लहइ सिवसुहं ॥२१॥

शब्दार्थः--जे शक्ति अने भक्तिना समूहवाळो पुरुष आ
प्रमाणे दान, शील, तप अने भावनाने आचरे छे, ते देव-
[illegible] अथवा [illegible] पूजेलां मोक्ष सुखने थो-
[illegible] कालमां पामे छे. ॥ २१ ॥

॥ इति भावकुलक ॥

॥ अथ [illegible] ॥

[illegible] ॥

[illegible] ॥ १ ॥

[illegible]

जीवदयाइं रमिजाइ, इंदियवग्गो दमिजाइ सयावि ॥
सच्चं चेव चविजाइ, धम्मस्स रहस्समिणमेव ॥२॥

शब्दार्थः–जीव दयामां रमवुं, इंद्रियोना समूहने नित्य दमवो अने सत्यज बोलवुं. एज धर्मनुं रहस्य छे. ॥ २ ॥

सीलं न हु खंमिजाइ, न संवसिजाइ समं कुसीलेहिं ॥
गुरुवयणं न खलिजाइ, जइनजाइधम्मपरमत्थो ॥३॥

शब्दार्थः–निश्चे शीलने न खंमवुं. कुशीलिआनी साथे न वसवुं, गुरुनुं वचन न उलंघवुं. एज श्री जिनेश्वरना धर्मनो उत्कृष्ट अर्थ छे. ॥ ३ ॥

चवलं न चंकमिजाइ, विरइजाइ नेव उब्भमो वेसो ॥
वंकं न पलोइजाइ, रुठावि न ग्रंति किं पिसुणा ॥४॥

शब्दार्थः–चपलपणाथी (अयतनाथी) न चालवुं, उद्भट वेष न पहेरवो, वांकी दृष्टिथी न जोवुं के, जेथी रीसायला एवा पण चाडीया शुं बोले ? ॥ ४ ॥

निअमिजाइ नीअजीह, अविआरिअ नेव किजाए कज्जं
न कुलक्कमोअ लुप्पइ, कुविउ किं कुणइ कलिकालो ५

शब्दार्थः–पोतानी जीभने वश करवी, अविचार्युं काम न करवुं अने पोताना सारा कुलाचारने न लोपवो; तो पछी कोप पामेलो कलिकाल पण शुं करे ? अर्थात् कांइ न करे. ॥५॥

मम्मं नउ ल्लविजाइ, कस्सवि आलं न दिजाइ कयावि ॥
कोवि न उक्कोसिजाइ, सज्जणमग्गो इमो डुग्गो ॥६॥

शब्दार्थः–कोइनुं मर्म वचन न बोलवुं, कोइने क्यारे पण आल न देवुं, तेमज कोइने तिरस्कार पण न करवो आ प्रमाणे सज्जननो मार्ग डुर्लभ छे. ॥ ६ ॥

वन्निज्जइ भिच्चगुणो, न परुक्खं न य सुअस्स पच्चखं ॥
महिलाउ नो मयाविहु, न नस्सए जेण माहप्पं ॥१७॥

शब्दार्थ--सेवकना गुण पाछल न वर्णववा, तेमज पुत्रना
गुण समक्ष न वर्णववा, स्त्रीना गुण पाछल अने समक्ष न
वर्णववा के, जेथी आपणी म्होटाइ नाश न पामे. ॥ १७ ॥

जंपिज्जइ पिअवयणं, किज्जइ विणउअ दिज्जए दाणं
परगुणगहणं किज्जइ, अमूलमंतं वसीकरणं ॥ १८ ॥

शब्दार्थः--प्रीय वचन बोलवुं, विनय करवो, दान आपवुं
अने पारका गुण ग्रहण करवा. ए मूल विनानो वशीकरण मंत्रछे.

पस्तावे जंपिज्जइ, सम्माणिज्जइ खलोवि बहुमज्झे ॥
नज्जइ सपरविसेसो, सयलत्ता तस्स सिज्झंति ॥ १९ ॥

शब्दार्थः--उचित अवसर बोलवुं, बहु माणसोनी मध्ये
खलने पण सन्मान आपवुं. स्वपरनुं विशेषपणुं न लजवुं. ए
प्रमाणे चालनारना सर्व अर्थो सिद्ध थाय छे. ॥ १९ ॥

मंतंनाणा न पासे, गम्मइ नइ परग्गहे अवीएहिं ॥
पच्चिअरं पाणिज्जइ, मुरुकुलीणत्तं दवइ एवं ॥ २० ॥

शब्दार्थः--मंत्र तंत्रने न जोवां, एकला पारका घरमां न
जवुं अने पोतानुं कहेलुं पालवुं. ए प्रमाणे चालवाथी सारुं कु-
लीनपणुं जणाय छे. ॥ २० ॥

[illegible] पुच्छिज्जा मणोगयं कहिज्जा सयं ॥
[illegible] इच्छियं, दिज्जिअइ जइ थिरं पिम्मं २१,

शब्दार्थः--[illegible] मध्ये स्थिर प्रेम इच्छे तो तेने [illegible]
[illegible]
[illegible]

कोवि न अवमन्निजाइ, न य गव्विजाइ गुणेहिं निअएहिं
न य विम्हउ वहिजाइ, बहुरयणा जेणिमा पुहवी ॥२२॥

शब्दार्थः--कोइने पण अपमान न आपवुं, तेम पोताना गुणथी गर्व पण न करवो. वली मनमां आश्चर्य पण न पामवुं. कारण के, आ पृथ्वी बहु रत्नवाली छे. ॥ २२ ॥

आरंभिज्जइ लहुअं, किज्जइ कज्ज महंत मविपच्छा ॥
न य उक्करिसो किज्जइ, लब्भइ गुरुअत्तणं जेण ॥२३ ॥

शब्दार्थ–प्रथम आरंभ थोमो करवो अने पाछलथी म्होटुं कार्य पण करवुं. वली पोतानुं उत्कृष्टपणुं न करवुं के, जेथी म्होटाइपणुं पामीये, ॥ २३ ॥

झाइज्जइ परमप्पा, अप्पसमाणो गणिज्जइ परो॥ ॥
किज्जइ न रागदोसो, छिन्निज्जइ तेण संसारो ॥२४॥

शब्दार्थ--परमात्मानुं ध्यान करवुं, बीजाने पोतानां समान गणवा, राग द्वेष पण न करवो, तेथी संसार छेदाइ जाय छे. २४

उवएसरयणमालं, जो एवं ठवइ सुठ निअकंठे ॥
सो नर सिवसुहलच्छी, वच्छयले रमइ सच्छाइं ॥ २५ ॥

शब्दार्थः-जे पुरुष आ प्रमाणे उपदेशरत्नमालाने पोताना कंठने विषे स्थापन करे छे; तेनां वक्षस्थलमां मोक्ष सुखनी लक्ष्मी पोतानी इच्छा प्रमाणे क्रीमा करे छे. ॥ २५ ॥

॥ इति उपदेश रत्न कोष. ॥

॥ अथ शाश्वताजिन नामादि संख्या स्तवन ॥

सिरि उसह वद्धमाणं, चंदाणण वारिसेण जिणचंदं ॥
नमिउं सासय जिण भव-ण संख परिकित्तणं काहं १

शब्दार्थ–सामान्य केवलीनी मध्ये चंद्र समान श्री रत्न

शब्दार्थः--वली म्होटी प्रतिमाउ पांचसो धनुष्यनी अने न्हानी प्रतिमाउं सात हाथनी छे. ते प्रतिमाउं मणिपीठ उपर देवछंदामां सिंहासन उपर बेठेली छे. ॥ ६ ॥

जिण पिठे छत्तधरा, पडिमा जिणअभिमुह दुन्नि चमरधरा
नागा भूआ जक्खा, कुंडधरा जिणमुहा दो दो ॥ ७ ॥

शब्दार्थः-जिनप्रतिमानी पाछल एक छत्रधर प्रतिमा अने सन्मुख बे चामरधारक प्रतिमा छे. वली जिनेश्वरना सन्मुख नागदेवनी, भूतदेवनी, जक्षदेवनी अने कुंडधारीनी बे बे प्रतिमा छे. (छत्रधरादिकनी सर्व मली अगीयार प्रतिमा थाय छे.) ७

सिरिवछ नाभि चुच्चुअ, पयकर केस महि जीह तालुरुणा
अंकमया नह अच्छी, अंतो रत्ता तहा नासा ॥ ८ ॥

शब्दार्थः--श्री जिनेश्वरना श्रीवत्स, नाभी, चुंचुक, हाथेली, पगनां तलीयां, मस्तक, जीभ अने तालवुं एटलां राता वर्णवालां छे. नख अने आंख अंकरत्नमय छे तेमज छेमे रातां वर्ण वाली नासिका छे. ॥ ८ ॥

ताराइ रोमराइ, अच्छिदला भमुहि केस रिठमया ॥
फलिह मय दसण वयरम--य सीस विदूममया उठा ए

शब्दार्थः--आंखनी कीकी, रुंवाटानी पंक्ति, आंखनी पांपण, नेण अने केश एटला श्यामरत्नमय छे, दांत स्फटिक रत्नमय छे, मस्तक वज्ररत्नमय छे अने होठ परवालां सरखा छे. ए

कणगमय जाणु जंघा, तणुजठो नास सवण भालोरू ॥
पत्तेयंक निसन्नाणं, इअ पडिमाणं भवे वन्नो ॥ १० ॥

शब्दार्थः-टींचण, जांघ, शरीरनी यष्टी, नासिका, कान, कपाल अने साथल ए सर्व सुवर्णमय छे, वली पद्मासने बेठेली

एआइ असुर जवण-ठिआइं पुव्वुत्त माण अद्धाइं ॥
दल मित्तो नागाई-नवसु वणेसु इत्त अद्धं ॥ १५ ॥

शब्दार्थः-ए विगेरे असुर कुमारमां रहेला जिनजूवननुं (लांबां, पहोला अने ऊंचानुं) प्रमाण पूर्वे कहेलाथी अर्धुं जाणवुं. नागकुमारादि नव निकायमां तेथी अर्धुं जाणवुं अने व्यंतर जूवनमां तेनाथी अर्धुं जाणवुं. (असुर कुमारमां लांबा ५० पहोला २५-ऊंचा ३६ नागकुमारमां-२५-१२॥-१८ व्यंतरमां १२॥-६।-९-योजन अनुक्रमे जाणवा. ॥ १५ ॥

दिग्गयगिरिसु चत्ता, दहे असी कंचणेसु इगसहसो ॥
सत्तरि महानईसु, सतरिसयं दीह वेअड्ढे ॥ १६ ॥

शब्दार्थः-दिग्गज पर्वत उपर चालीश, द्रहमां एंसी, कंचनगिरिने विषे एक हजार, महा नदीयोमां सीतेर अने लांबा वैताढय उपर एकसो सीतेर जिन जुवन छे. ॥ १६ ॥

कुंमेसु तिसय असीआ, वीसं जमगेसु पंचचूलासु ॥
इक्कारस सय सत्तरि, जंबूपमुहे दसतरूसु ॥ १७ ॥

शब्दार्थः-कुंमने विषे त्रणसो एंसी, यमक पर्वत उपर वीस, मेरुपर्वतनी चूलिका उपर पांच अने जंबू प्रमुख दश वृक्ष उपर अगीयार सो सीत्तेर जिनजुवन छे. ॥ १७ ॥

वट्टवेअड्ढे वीसा, कोस तय ढंच दीहविछारा ॥
चउदस धणुसय चालीस अहिअ उच्चत्तणे सव्वे १८

शब्दार्थ-वृत वैताढय उपर वीश जिनजुवन छे. ए सर्व दिग्गजादि दश स्थानना २९९५ जिनजुवन एक गाउ लांबां अने अर्धो गाउ पहोलां तेमज चौदसोचालीस धनुष्य ऊंचां छे.

धम्मदीविविदिसिसोलस, सोहम्मीसाणग्गदेविनयरीसु ॥

एवं बत्तीससया, गुणसठि जुआ तिरिअलोए ॥ १९ ॥

शब्दार्थ--आठमा द्वीपनी विदिशाए सौधर्म अने ईशान ए बे इंद्रनी सोल देवीनी सोल नगरीयोमां सोल जिनभुवन छे. एम तिर्छालोकमां सर्व मली बत्रीससो ने ओगणसाठ जिनभुवनछे

एवं तिहुअणमज्झे, अड कोडी सत्तवन्न लक्खाइं ॥
बेअसया बासीया, सासय जिणभवण वंदामि ॥ २० ॥

शब्दार्थः--ए प्रमाणे पूर्वे कहेला उर्ध्व, अधो अने तिर्छा ए त्रण लोकमां आठ क्रोड, सत्तावन लाख, बसोने ब्यासी शाश्वता जिनभुवनने हुं वांदुछुं. ॥ २० ॥

सठी लक्खा गुणनवइ कोडि, तेरकोडि सय बिंब भवणेसु
तिरिअम्मि बीसा इगनवइ, सहस लक्ख तिगं तिरिअं २१

शब्दार्थः--तेरसो क्रोड, नव्यासी क्रोड अने साठ लाख एटलां जिनबिंब भुवनपतिमां छे, तेमज त्रणलाख एकाणुं हजार त्रणसो वीस जिनबिंब तिर्छालोकमां छे. ॥ २१ ॥

[illegible] कोडि, [illegible], बावन्ना कोडि चउणवइ लक्खा ॥
चउ [illegible] सहस [illegible], सठा वेमाणि बिंबाणि ॥२२॥

शब्दार्थ- एकसो क्रोड, बावन क्रोड, चोराणुं लाख, चुमालीश हजार [illegible] एटलां जिनबिंब वैमानिक देव लोकमां छे.

[illegible] कोडि सयाइं, [illegible] कोडि अडवन्न लक्खाइं ॥
[illegible] असीआ, तिहुअण बिंबाणि पणमामि २३

शब्दार्थ--[illegible] सो क्रोड, बेंतालीसक्रोड, अठावन लाख, [illegible] त्रण भुवनमां सर्व जिनबिंबने [illegible] ॥ २३ ॥

[illegible] विदिसाइं ॥२४॥

[illegible]

शब्दार्थः-श्री भरतचक्रवर्ती विगेरे राजाओए आ अढीद्वीप मां जे प्रतिबिंबो निपजाव्यां छे अने देवेंद्र सूरीश्वरे स्तव्यां छे, ते जिनबिंब भव्यजनोने सिद्धि सुख आपो. ॥ २४ ॥

उस्सेह मंगुलेणं, अह उड्ढमसेस सत्त रयणीउ ॥
तिरिलोए पण धणु सय, सासय पडिमा पणिवयामि २५

शब्दार्थः-उत्सेधांगुलनां प्रमाणे करी अधोलोकमां अने ऊर्ध्वलोकमां सर्वे सात हाथनी अने तिर्छालोकमां पांचसो धनुष्य नी शाश्वति प्रतिमाने हुं प्रणमुं छुं. ॥ २५ ॥

॥ इति शाश्वत जिननामादि संख्यास्तवन समाप्तम् ॥

॥ अथ त्रिलोक चैत्य बिंब संख्या ॥

॥ अधोलोकमां जिनभुवनबिंब संख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नाम	भुवन संख्या	जिनबिंब संख्या
१	असुरकुमारमां ॥	६४०००००	११५२००००००
२	नागकुमारमां ॥	८४०००००	१५१२००००००
३	सुवर्णकुमारमां ॥	७२ लाख	१२९६००००००
४	विद्युतकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
५	अग्निकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
६	द्वीपकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
७	उदधिकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
८	दिग्कुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
९	वायुकुमारमां ॥	९६ लाख	१७२८००००००
१०	स्तनितकुमारमां ॥	७६ लाख	१३६८००००००
प्रत्येक	चैत्ये प्रतिमा १८० छे	कुल ७७२०००००	कुल १३८९६००००००

॥ उर्ध्वलोकमां जिनभुवन बिंबसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थाननां नांम	भुवन संख्या	जिनबिंब संख्या
१	सौधर्मदेवलोके ॥	३२ लाख	५७६००००००
२	ईशानदेवलोके ॥	२८ लाख	५०४००००००
३	सनतकुमारमां ॥	१२ लाख	२१६००००००
४	माहेंद्रदेवलोके ॥	८ लाख	१४४००००००
५	ब्रह्मदेवलोके ॥	४ लाख	७२००००००
६	लांतकदेवलोके ॥	५००००	९००००००
७	महाशुक्रदेवलोके ॥	४००००	७२०००००
८	सहस्रारदेवलोके ॥	६०००	१०८००००
९	आनतदेवलोके ॥	२००	३६०००
१०	प्राणतदेवलोके ॥	२००	३६०००
११	आरणदेवलोके ॥	१५०	२७०००
१२	अच्युतदेवलोके ॥	१५०	२७०००
३	प्रथमत्रीके } ग्रैवेयकमां ॥	१११	१३३२०
४	बीजीत्रीके ॥	१०७	१२८४०
३	त्रीजीत्रीके ॥	१००	१२०००
५	अनुत्तरमांहे ॥	५	६००
		कुल ८४९७०२३	कुल १५२९४४४७६०

प्रथमदेवलोकथी १२ मा सुधी प्रत्येक चैत्ये १८० प्रतीमा छे॥ [illegible] ६० प्रतीमा । अने आगलना नोभुवनो १२ प्रती मा । मध्य भुवनो १८० प्रतीमा । सर्व मली १८० जाणवी ॥ प्र [illegible] १२० [illegible] छे, माटे [illegible] नथी. ॥

॥ तिर्च्छालोकमां चैत्य बिंबसंख्या ॥

स्थान संख्या	स्थानमां नांम	जिनचैत्य संख्या	जिनबिंब संख्या
१	व्यंतर असंख्यनगरे॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
२	जोतषीचरथरमां ॥	असंख्यभुवन	असंख्यबिंब
३	नंदीश्वरद्वीपमां प०१२४	५२	६४४८
४	कुंम्लद्वीपमां ॥	४	४९६
५	रुचकद्वीपमां ॥	४	४९६
६	कुंम्लगिरिमां प० १२०	३०	३६००
७	देव उत्तरकुरुमां ॥	१०	१२००
८	मेरुवनने विषे ॥	८०	९६००
९	गजदंता पर्वते ॥	२०	२४००
१०	वखार पर्वते	८०	९६००
११	इखुकार पर्वते ॥	४	४८०
१२	मानुषोत्तर पर्वते ॥	४	४८०
१३	दिग्गजे ॥	४०	४८००
१४	द्रहे ॥	८०	९६००
१५	कंचनगिरिये ॥	१०००	१२००००
१६	महानदीयोये ॥	७०	८४००
१७	दिर्घ वैताढ्य गिरिये॥	१७०	२०४००
१८	कुंडे ॥	३८०	४५६००
१९	यमकगिरिये	२०	२४००
२०	मेरुपर्वतनी चूली मांये	५	६००
२१	जंबुप्रमुख वृक्षे ॥	११७०	१४०४००
२२	वृतवैताढ्यगिरिये ॥	२०	२४००
२३	नगरी वीजयादिके ॥	१६	१९२०
		कुल ३२५९	कुल ३९११२०

अठावयं समेए, पावा चंपाइं उज्जंत नगे य ॥
वंदित्ता पुन्न फलं, सयगुणं तंपि पुंमरीए ॥ १३ ॥

शब्दार्थः--ऋषभ देवनुं मोक्ष क्षेत्र अष्टापद, जिन सिद्धक्षेत्र समेतशिखर, वीरप्रभुनुं मोक्षस्थान पावापुरी वासुपूज्यनुं सिद्धक्षेत्र चंपानगरी अने नेमनाथनुं मोक्षस्थान गिरनार, ए सर्व तीर्थने वांदवाथी सो गणुं पुण्य पुंमरिक तीर्थने जेटवाथी थाय छे.

पूआ करणे पुन्नं, एगगुणं सयगुणं च पमिमाए ॥
जिणजवणेण सहस्सं, णंतगुणं पालणे होइ ॥१४॥

शब्दार्थः--पूजा करवाथी जे पुण्य थाय ते एक गणुं, तेथी सो गणुं प्रतिमा जरावबाथी थाय छे, तेथी जिन जुवन करावबाथी हजारगणुं अने अनंतगणुं फल तीर्थरक्षाथी होय छे. १४

पमिमं चेइहरं वा, सित्तुंजगिरीस्स मत्तए कुणइ ॥
जूत्तूण जरहवासं, वसइ सग्गेण निरुवसग्गे ॥१५॥

शब्दार्थः--जे माणस शत्रुंजय पर्वत उपर प्रभुनी प्रतिमा अथवा जिनमंदिर करावे छे, ते माणस जरत क्षेत्रनुं राज्य जोगवीने स्वर्ग अथवा मोक्ष पामे छे. ॥ १५ ॥

नवकार पोरिसीए, पुरिमड्ढे गासणं च आयामं ॥
पुंमरीयं च सरंतो, फलकंखी कुणइ अजत्तठं ॥१६॥

शब्दार्थ-फलनी इछा करनारो नोकारसीनुं, पोरसीनुं, पुरिमढनुं, एकासणानुं अने आंबीलनुं पटलानुं पच्चक्खाण करे ते, मज पुंमरिकनुं स्मरण करतो छतो उपवास करे. ॥ १६ ॥

छठ ठम दसम डुवा-लसाण मास द्धमास खवणाणं ॥
तिगरणसुद्धो लहइ, सित्तुंजं संजरंतोअ ॥ १७ ॥

शब्दार्थः-छठ, अठम, दशम, डुवालस, पखक्षमण अने मा

शुभो न भावोऽप्यभवद्भवेऽस्मिन्,
विभो मया भ्रांतमहो मुधैव ॥ ४ ॥

शब्दार्थ–हे विभो ! में दान आप्युं नथी, सुशोभित एवुं शील पाळ्युं नथी, तप कर्युं नथी तेमज, आ भवमां मने शुभ भाव पण थयो नथी, माटे अहो ! हुं फोगटज भ्रांती पाम्योछुं.

दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो,
दुष्टेन लोभाख्यमहोरगेण ॥
ग्रस्तोऽभिमानाजगरेण माया–
जालेन बद्धोऽस्मि कथं भजे त्वां ॥ ५ ॥

शब्दार्थः–हे प्रभो ! क्रोधरूप अग्निथी बळेलो, लोभरूप दुष्ट महा सर्पे डसेलो, अभिमान रूप अजगरे गळेलो अने मायाथी बंधाइ रहेलो हुं तमने शी रीते भजी शकुं ? ॥ ५ ॥

कृतं मयामुत्र हितं न चेह, लोकेऽपि लोकेश सुखं न मेऽभूत्
अस्मादृशां केवलमेव जन्म, जिनेश जज्ञे भवपूरणाय ॥६॥

शब्दार्थः–हे लोकेश ! में परलोकमां हितकारी अने आ लोकमां पण हितकारी एवुं कांइ कर्युं नथी, जेथी मने आ जन्ममां सुख नथी मळ्युं हे जिनेश्वर ! ते माटे अमारा सरखा नो जन्म फक्त भव पूरवा माटेज थयो छे. ॥ ६ ॥

मन्ये मनो यन्न मनोज्ञवृत्तं, त्वदास्यपियूषमयूखलाभात् ॥
द्रुतं महानंदरसं कठोर, मस्मादृशां देव तदश्मतोऽपि॥७॥

शब्दार्थः–हे मनोज्ञवृत्त ! हुं जाणुं छुं के, तमारां मुखरूप अमृतनां किरणोनो लाभ पामी पण अमारुं मन महा आनंदने ग्रहण करतुं नथी, तेथी ते पथ्थरथी पण कठोर छे. ॥ ७ ॥

बुद्धि गली जती नथी; बाल्यादि अवस्था गइ, पण विषयनो अभि
लाष गयो नहि; वली औषधविधिमां यत्न कर्यो, पण धर्ममां यत्न
कर्यो नहि. खरेखर आ मने म्होटी मोह विटंबना लागी छे. १६

नात्मानपुण्यंनभवोनपापं, मयाविटानांकटुगीरपीयं ॥
आधारिकर्णेत्वयिकेवलार्के, परिस्फुटेसत्यपिदेवधिग्मां ॥

शब्दार्थः—हे देव ! केवलज्ञाने करीने सूर्यरूप आप प्रगट
छता में " आत्मा नथी, पुण्य नथी, भव नथी, पाप नथी. "
आवी नास्तिकोनी कडवी वाणीने पान करी तथा कानमां धा
रण करी, तेथी मने धिक्कार छे. ॥ १७ ॥

न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधुधर्मः ॥
लब्ध्वापिमानुष्यमिदंसमस्तं, कृतं मयारण्यविलापतुल्यं ॥

शब्दार्थः—में मनुष्य जन्म पामीने देव पूजा न करी, पात्र
पूजा न करी, श्रावक धर्म न पाल्यो तेमज साधुधर्म पण न
साध्यो; तेथी में ए मळेलो मनुष्य जन्म अरण्यमां विलाप क-
रवा तुल्य कर्यो छे. अर्थात् फोगट गुमावी नाख्यो छे. ॥१८॥

चक्रेमयासत्स्वपिकामधेनुः, कल्पद्रुचिंतामणिषुस्पृहार्त्तिः ॥
नजैनधर्मेस्फुटशर्मदेपि, जिनेशमेपश्यविमूढभावं ॥१९॥

शब्दार्थः—हे जिनेश्वर ! में असत्य एवी कामधेनु, कल्प-
वृक्ष अने चिंतामणि रत्न विगेरे वस्तुमां स्पृहा करी; परंतु प्रगट
सुख आपनारा जिन धर्मने विषे स्पृहा करी नहि. ए म्हारा वि-
[illegible] मूढ भावने जुओ. ॥ १९ ॥

सद्भोगलीला न च रोगकीला, धनागमोनोनिधनागमश्च ॥
दारानकारानरकस्यचित्ते, व्यचिंतिनित्यंमयकाधमेन २०

शब्दार्थः—हे प्रभु [illegible] सद्भोगादि मारा [illegible]

खीलानो विचार करयो, पण तेथी थता रोगरूप खीलनो विचार करयो नहि; धन मेलवानो विचार करयो, पण मरणनो विचार करयो नहि; स्त्रीयोनो विचार करयो, पण नरकनी वेमीनो विचार करयो नहि, ॥ २० ॥

स्थितंनसाधोहृदिसाधुवृत्तात्, परोपकारान्नयशोर्जितंच ॥
कृतंनतीर्थोद्धरणादिकृत्यं, मयामुधाहारितमेवजन्म २१

शब्दार्थ-म्हारा हृदयमां उत्तम साधुवृत्ति रही नहि तेम में परोपकार माटे यश पण मेलव्यो नहि, वली तीर्थ उद्धारादि कार्य पण कर्युं नहि, तेथी में खरेखर म्हारो जन्म फोगट गुमावी नाख्यो. ॥ २१ ॥

वैराग्यरंगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शांतिः ॥
नाध्यात्मलेशोममकोपिदेव, तार्यःकथंकारमयंभवाब्धिः ॥

शब्दार्थः-मने गुरुए कहेलां वचनमां वैराग्यरंग न थयो, दुर्जनोनां वचनमां शांति पण न थइ. वली मने कोइ पण अध्यात्म लेश प्रगटयो नहि; तेथी हे देव ! म्हाराथी आ संसार समुद्र शी रीते तराय ॥ २२ ॥

पूर्वेभवेकारिमयानपुण्यं,आगामिजन्मन्यपिनोकरिष्ये ॥
यदीदृशोहंममतेननष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीशः ॥२३॥

शब्दार्थ-में पूर्वभवमां पुण्य कर्युं नथी, आवता भवने विषे पण करीश नहि के, जेथी हुं आवो दुःखीरह्योछुं,माटे हे ईश म्हारा भूत, भविष्य अने वर्त्तमान कालना त्रणे जन्म वृथा नाश पाम्या.

किंवामुधाहंबहुधासुधाभुक्, पूज्यत्वदग्रेचरितंस्वकीयं ॥
जल्पामियस्मात्त्रिजगत्स्वरूप–निरूपकस्त्वंकियदेतदत्र॥

शब्दार्थ-हे अमृतभोजी ! हुं तमारी आगल फोगट म्हा

देहेष्वात्मधिया जाताः, पुत्रभार्यादिकल्पनाः ॥
संपत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं जगत् ॥ १४ ॥

शब्दार्थः--देहने विषे आत्मबुद्धि करवाथी पुत्र भार्यादि कल्पना थइ छे अने ते अनात्मिय कल्पनाथी पुत्र भार्यादिने आत्मानी संपत्ति माने छे. हाय हाय ! एज कारणे पोतानां स्वरूपना ज्ञानथी भ्रष्ट थयेलुं जगत् नाश पाम्युं छे अर्थात् बहिरात्मा रूप बन्युं छे. ॥ १४ ॥

मूलं संसारदुःखस्य, देह एवात्मधीस्ततः ॥
त्यक्त्वैनां प्रविशेदंतर्बहिरव्यावृतेंद्रियः ॥ १५ ॥

शब्दार्थः--शरीर एज आत्मा एवी जे बुद्धि तेज संसारना दुःखनुं कारण छे माटे ते शरीर एज आत्मा एवी बुद्धिने त्यजी दइ बाह्य अप्रवृत्त छे इंद्रियो जेनी एवो पुरुष अंतरमां प्रवेश करे छे. अर्थात् आत्माने विषे आत्मबुद्धि करे छे. ॥ १५ ॥

मत्तश्च्युत्वेन्द्रियद्वारैः पतितो विषयेष्वहम् ॥
तान्प्रपद्याहमिति मां, पुरा वेद न तत्त्वतः ॥ १६ ॥

शब्दार्थः--पोतानी (आत्मस्वरूपथी) चवीने हुं इंद्रियद्वारे करीने विषयोने विषे पडेलो हुं अर्थात् प्रवृत्त थयेलो हुं. माटे ते विषयोने (आ मने उपकार करनारा छे, एवा विचारथी) [illegible] करीने अनादि काळथी हुं मने पोताने तत्त्वथी जाणतो [illegible] नथी. ॥ १६ ॥

एवं त्यक्त्वा बहिर्वाचं, त्यजेदन्तरशेषतः ॥
एष योगः समासेन, प्रदीपः परमात्मनः ॥ १७ ॥

शब्दार्थः--[illegible] पुत्र, स्त्री, धन [illegible] हुं कर्ता हुं [illegible]

[illegible]

सुखी हुं, दुखी हुं, इत्यादि लक्षणवाली) अंतर्वाणीने सर्व प्रकारें त्यजी देवी. ए प्रमाणे बहिरात्माने अने अंतरात्माने त्यजी देवा रूप योग संक्षेपथी परमात्मानां स्वरूपने प्रकाश करनारो छे.

यन्मया दृश्यते रूपं, तन्न जानाति सर्वथा ॥
जानन्न दृश्यते रूपं, ततः केन ब्रवीम्यहम् ॥ १८ ॥

शब्दार्थः-हुं जे स्वरूपने जोवुं छुं ते मने सर्व प्रकारे जाणतुं नथी अने जेने हुं जाणुं छुं ते स्वरूप देखातुं नथी तो पछी हुं कोनी साथे बोलुं ? ॥ १८ ॥

यत्परैः प्रतिपाद्योऽहं, यत्परान् प्रतिपादये ॥
उन्मत्तचेष्टितं तन्मे, यदहं निर्विकल्पकः ॥ १९ ॥

शब्दार्थः-उपाध्यायादिकथी जे हुं शिक्षण कराउं छुं अथवा हुं शिष्यादिकने जे शिक्षण करुं छुं. ते सर्व म्हारुं उन्मत्त चेष्टित छे कारणके, हुं निर्विकल्प छुं. ॥ १९ ॥

यदग्राह्यं न गृह्णाति, गृहीतं नापि मुंचति ॥
जानाति सर्वथा सर्वं, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥२०॥

शब्दार्थ-जे शुद्ध एवुं आत्मस्वरूप, नहि ग्रहण करवा योग्य एवां कर्मना उदय निमित्त क्रोधादिस्वरूपने ग्रहणतुं नथी अने ग्रहण करेला अनंतज्ञानादि स्वरूपने त्यजी देतुं नथी. वली द्रव्य पर्यायादिके करीने सर्व चेतन तथा अचेतनने जाणे छे, ते हुं पोतावीज जाणवा योग्य आत्मा छुं. ॥ २० ॥

उत्पन्नपुरुषभ्रांतेः स्थाणौ यद्धच्चेष्टितम् ॥
तद्धन्मे चेष्टितं पूर्वं, देहादिष्वात्मविभ्रमात् ॥ २१ ॥

शब्दार्थः-थांभलामां उत्पन्न थयेली पुरुष भ्रांतिने लीधे जवी रीते विविध उपकारादि याच चेष्टा कराय छे तेवीज रीते

आ कहेला आत्मस्वरूपनुं ज्ञान थवा पूर्वे देहादिकने विषे आ-
त्मबुद्धिना भ्रमथी म्हारुं चेष्टित हतुं. ॥ २१ ॥

यथासौ चेष्टते स्थाणौ, निवृत्ते पुरुषाग्रहे ॥
तथा चेष्टोऽस्मि देहादौ, विनिवृत्तात्मविभ्रमः ॥२२॥

शब्दार्थः—जेवी रीते (थांभलामां उत्पन्न थयेली पुरुष
भ्रांतिवालो) पुरुष, पुरुषारोप निवृत्त पामेला जड पदार्थमां उप-
कार तथा अपकार न करवारूप जे चेष्टा करे छे तेवी रीते दे-
हादिकमां निवृत्त पामी छे आत्मभ्रांति जेने एवी चेष्टा वालो
हुं थयो. ॥ २२ ॥

येनात्मनानुभूयेऽह-मात्मनैवात्मनाऽत्मनि ॥
सोऽहं न तन्न सा नासौ, नैको न द्वौ न वा बहुः २३

शब्दार्थः—जे चैतन्यस्वरूप आत्माए करीने हुं पोतानां
स्वरूपने [illegible] पोताने जाणवाना स्वभाववाला आत्मावडेज
अनुभव करुं छुं, ते हुं पुरुष, स्त्री के नपुंसक नथी. वली
एक के [illegible] बहु नथी. ॥ २३ ॥

यदभावे सुषुप्तोऽहं, यद्भावे व्युत्थितः पुनः ॥
अतीन्द्रियमनिर्देश्यं, तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ॥ २४ ॥

शब्दार्थः—जे पोताने जाणवा योग्य शुद्ध स्वरूपने न पाम-
[illegible] निद्रामां सुतेलो अने वली जे पोताने जाणवा योग्य
[illegible] जागतो थयेलो छे ते हुं इन्द्रियोने अगो-
[illegible] जाणवा योग्य छुं ॥ २४ ॥

[illegible] मां प्रपश्यतः ॥
[illegible] न प्रियः ॥ २५ ॥

[illegible] तथा अने क-
[illegible]
[illegible]

वडे जोवाथी रागादिक शत्रुओ क्षय पामे छे. पछी मने कोइ शत्रु नथी अने मित्र पण नथी. ॥ २५ ॥

मामपश्यन्नयं लोको, न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥
मां प्रपश्यन्नयं लोको न मे शत्रुर्न च प्रियः ॥२६॥

शब्दार्थः--मने न जोइ शकतो एवो आ लोक म्हारो शत्रु अने मित्र नथी तेमज मने जोइ शकतो एवो पण आ लोक शत्रु अने मित्र नथी. ॥ २६ ॥

त्यक्त्वैव बहिरात्मानमंतरात्मव्यवस्थितः ॥
भावयेत्परमात्मानं, सर्वसंकल्पवर्जितः ॥ २७ ॥

शब्दार्थः--ए प्रमाणे अंतरात्माने विषे रहेलो पुरुष बहिरात्माने त्यजी सर्व प्रकारना संकल्प रहित थयो छतो परमात्माने भावे.

सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन्भावनया पुनः ॥
तत्रैव दृढसंस्काराल्लभते ह्यात्मनः स्थितिम् ॥२८॥

शब्दार्थ--वळी ते परमात्माने विषे भावनावडे ग्रहण करी छे वासना जेणे एवो ते अनंतज्ञानस्वरूप परमात्मारूप हुं, ते परमात्माने विषे दृढ संस्कारथी (अविचल वासनाथी) आत्मानी स्थितिने पामुं छुं. ॥ २८ ॥

मूढात्मा यत्र विश्वस्तस्ततो नान्यद्भयास्पदम् ॥
यतोऽभीतस्ततो नान्यदभयस्थानमात्मनः ॥ २९ ॥

शब्दार्थः--बहिरात्मा जे पुत्र स्त्री विगेरेने विषे (आ म्हारा छे अने हुं तेमनो छुं.) एवो विश्वास पाम्यो छे, तेथी तेने बीजो भय नथी. अर्थात् शरीरने लीधेज भय रहेलो छे. वळी जे परमात्म स्वरूपने जाणवाथी अभय पाम्यो छे, तेथी बीजुं आत्माने अभयस्थान नथी. ॥ २९ ॥

सर्वेंद्रियाणि संयम्य, स्तिमितेनांतरात्मना ॥
यत्क्षणं पश्यतो भाति, तत्तत्वं परमात्मनः ॥ ३० ॥

शब्दार्थः--सर्वे इंद्रियोने नियममां राखीने क्षण मात्र अनुभव करवाथी निश्चल एवा मन वडे जे स्वरूप देखाय छे, तेज परमात्मानुं स्वरूप छे. ॥ ३० ॥

यः परात्मा स एवाहं, योऽहं स परमस्ततः ॥
अहमेव मयोपास्यो, नान्यः कश्चिदिति स्थितिः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थः--जे परमात्मा तेज हुं. अने जे हुं ते परमात्मा. तेथी हुं मारे पोताने उपासना करवा योग्य हुं. बीजो कोइ उपासना करवा योग्य नथी, ए स्थिति छे. ॥ ३१ ॥

प्राच्याव्य विषयेभ्योऽहं, मां मयैव मयि स्थितम् ॥
बोधात्मानं प्रपन्नोऽस्मि, परमानंदनिर्वृतम् ॥ ३२ ॥

शब्दार्थः--आत्मस्वरूपवडे करीने विषयथी निवृत्ति पामीने आत्मस्वरूपने [illegible] म्हारा ज्ञानस्वरूप अने उत्तम आनंदथी [illegible] एवा आत्माने हुं प्राप्त थयेलो छुं ॥ ३२ ॥

यो न वेत्ति परं देहा--देवमात्मानमव्ययम् ॥
लभते न स निर्वाणं, तप्त्वापि परमं तपः ॥ ३३ ॥

शब्दार्थः--जे पुरुष, प्राप्त थयेला देहथी पर अने अव्यय एवा आत्माने [illegible] नथी जाणतो, ते उत्कृष्ट एवां तपने [illegible] पण [illegible] पामतो नथी. ॥ ३३ ॥

आत्मदेहांतरज्ञान--जनिताह्लादनिर्वृतः
[illegible] न खिद्यते ॥ ३४ ॥

[illegible]

[illegible]

भोगवतो एवो पण माणस खेद पामतो नथी. ॥ ३४ ॥

रागद्वेषादिकल्लोलैरलोलं यन्मनोजलम् ॥
स पश्यात्यात्मनस्तत्त्वं, स तत्त्वं नेतरो जनः ॥३५॥

शब्दार्थः—रागद्वेषादि कल्लोलथी जेनुं मनरूप जल डोलाइ गयुं नथी, ते आत्मतत्त्वने जूए छे वली ते जोनारो पोतेज पर मात्मरूप छे बीजो परमात्म रूप नथी. ॥ ३५ ॥

अविक्षिप्तं मनस्तत्वं, विक्षिप्तं भ्रांतिरात्मनः ॥
धारयेतदविक्षिप्तं, विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः ॥३६॥

शब्दार्थः—रागादिकथी अपरिणामित एवुं आत्मानुं वास्त विक स्वरूप छे अने तेनाथी जे उलटुं ते आत्मानी भ्रांति आ त्मरूप रहित छे. ते कारण माटे रागादिकथी अपरिणमित एवा मनने धारण करवुं, परंतु रागादिकना विकारवाला मननो आ- श्रय करवो नहि. ॥ ३६ ॥

आ विद्याभ्यासंस्कारैरवशं क्षिप्यते मनः ॥
तदेव ज्ञानसंस्कारैः, स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्टते ॥ ३७ ॥

शब्दार्थः—शरीरने विषेज पवित्र अने स्थिर एवुं आत्मा तथा आत्मिय विगेरे जे ज्ञान ते अविद्या. ते अविद्याना अभ्या- संथी उत्पन्न थयेली वासनाये करीने अवश (विषयने अने इंद्रियो ने आधिन तथा आत्माने आधिन नहि) एवुं मन थाय छे. तेज ग- न ज्ञानसंस्कारे करीने आत्मस्वरूपने विषे रहे छे. ॥ ३७ ॥

अपमानादयस्तस्य, विक्षेपो यस्य चेतसः
नापमानादयस्तस्य, न क्षेपो यस्य चेतसः ॥ ३८

शब्दार्थः—जेनां चित्तने रागादि परिणाम छे तेने अपमाना

परत्राहंमतिः स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम् ॥
स्वस्मिन्नहंमतिश्च्युत्वा, परस्मान्मुच्यते बुधः ॥ ४३ ॥

शब्दार्थ--शरीरने विषे आत्मबुद्धिवालो बहिरात्मा आत्म स्वरूपथी भ्रष्ट थइने खरेखर बंधन पामे छे अने आत्मस्वरूपने विषे आत्मबुद्धिवालो अंतरात्मा शरीरादिकथी जूदो थइने मुक्ति पामे छे. ॥ ४३ ॥

दृश्यमानमिदं मूढस्त्रिलिंगमवबुध्यते ॥
इदमित्यवबुद्धस्तु निष्पन्नं शब्दवर्जितम् ॥ ४४ ॥

शब्दार्थ--बहिरात्मा आ देखाता पुरुष, स्त्री अने नपुंसक रूप त्रण लिंगने त्रिलिंगरूप माने छे अने अंतरात्मा अनादिसिद्ध अने विकल्पादिके वर्जित एवा आत्मतत्त्वनेज मानेछे. ॥ ४४ ॥

जानन्नप्यात्मनस्तत्त्वं, विविक्तं भावयन्नपि ॥
पूर्वविभ्रमसंस्काराद्भ्रांतिं भूयोऽपि गच्छति ॥ ४५ ॥

शब्दार्थ--अंतरात्मा आत्मतत्त्वने जाणतो छतो तथा शरीरादिकथी जूदुं मानतो छतो पण पूर्व विभ्रमना संस्कारथी फरीने पण भ्रांति पामे छे. ॥ ४५ ॥

अचेतनमिदं दृश्य--मदृश्यं चेतनं ततः ॥
क रुष्यामि क तुष्यामि, मध्यस्थोऽहं भवाम्यतः ॥४६॥

शब्दार्थः--आ देखातुं एवुं शरीरादि जड छे अने न देखातुं एवुं आत्मस्वरूप चेतन्यरूप छे, माटे हुं कोना क्रोध अने कोना उपर संतोष करुं. तेथी हवे हुं मध्यस्थरूप थाउं छुं. ४६

त्यागादाने बहिर्मूढः, करोत्यध्यात्ममात्मवित् ॥
नांतर्बहिरुपादानं, न त्यागो निष्टितात्मनः ॥ ४७ ॥

शब्दार्थः—बहिरात्मा बाह्यवस्तुने विषे त्याग अने अभिलाष करे छे. अंतरात्मा आत्मस्वरूपने विषे त्याग अने अभिलाष करे छे, परंतु कृत कृत्य एवा परमात्माने तो अंतरात्माने विषे अभिलाष अने बहिर्वस्तुने विषे त्याग एमानुं कांइ नथी. ॥ ४७ ॥

युंजीत मनसात्मानं, वाक्कायाभ्यां वियोजयेत् ॥
मनसा व्यवहारं तु, त्यजेद्वाक्काययोजितम् ॥ ४८ ॥

शब्दार्थ—मानसिक ज्ञानथी आत्मानुं ध्यान करवुं, पण वाणी अने कायाथी आत्माने जूदो करवो वली मननी साथे वाणी अने कायाथी जोडाएला व्यवहारने मने करीने त्यजी देवो.

जगद्देहात्मदृष्टीनां, विश्वास्यं रम्यमेव च ॥
स्वात्मन्येवात्मदृष्टीनां, क्व विश्वासः क्व वा रतिः ॥ ४९ ॥

शब्दार्थः—शरीरने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् बहिरात्माने जगत् विश्वास करवा योग्य अने मनोहर लागे छे, परंतु आत्माने विषे आत्मदृष्टिवाला अर्थात् अंतरात्माने क्यां विश्वास अने क्यां रति होय छे ? अर्थात् तेने पुत्रादिकने विषे विश्वास अथवा प्रीति होती नथी.

आत्मज्ञानात्परं कार्यं, न बुद्धौ धारयेच्चिरम् ॥
कुर्यादर्थवशात्किंचिद्वाक्कायाभ्यामतत्परः ॥ ५० ॥

शब्दार्थः—आत्मज्ञान विना बीजुं कार्य बहु वखत मनमां धारवुं नहि अने जो भोजन व्याख्यानादिक कार्य करवुं पडे तो [illegible] वाणी अने कायाथी पोताना अने [illegible] करवुं. ॥ ५० ॥

[illegible] नास्ति यन्नियतेन्द्रियः ॥
[illegible] ज्योतिरुत्तमम् ॥ ५१ ॥

[illegible]

शब्दार्थ-हुं इंद्रियोवडे जे शरीरादिक जोउं छुं, ते म्हारुं रूप नथी, परंतु इंद्रियोने स्वाधिन करीने हुं म्हारी अंदर उत्तम सुखरूप अने इंद्रियोने अगोचर एवुं जे ज्ञान जोउं छुं. ते म्हारुं स्वरूप छे. ॥ ५१ ॥

सुखमारब्धयोगस्य, बहिर्दुःखमथात्मनि ॥
बहिरेवासुखं सौख्य-मध्यात्मं भावितात्मनः ॥ ५२ ॥

शब्दार्थः--आत्मस्वरूप जाणवामां उद्यमवंत थयेलाने बाह्य विषयमां सुख थाय छे तथा आत्मविषयमां दुःख थाय छे, अने यथार्थ आत्मस्वरूप जाणेलाने बाह्य विषयमां दुःख तथा आत्मविषयमां सुख थाय छे. ॥ ५२ ॥

तद्ब्रूयात्तत्परान्पृच्छे-त्तदिच्छेत्तत्परो भवेत् ॥
येनाविद्यामयं रूपं, त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत् ॥ ॥ ५३ ॥

शब्दार्थः--ते आत्मस्वरूप पोते कहेवुं, बीजाने पूछवुं, ते आत्मस्वरूपनेज इच्छवुं अने तेमां तत्पर थवुं के, जेथी बहिरात्मरूप त्यजी दइ आत्मस्वरूपने पमाय. ॥ ५३ ॥

शरीरे वाचि चात्मानं, संधत्ते वाक्शरीरयोः ॥
भ्रांतोऽभ्रांतः पुनस्तत्त्वं पृथगेषां निबुध्यते ॥ ५४ ॥

शब्दार्थः--वाणी अने शरीरने विषे भ्रांति पामेलो बहिरात्मा पोताने शरीरमां अने वाणीमां आरोपण करे छे. वली यथार्थ ते स्वरूपने जाणनारो अंतरात्मा वाणीनां, शरीरनां अने आत्मानां स्वरूपने जूदा जूदा जाणे छे. ॥ ५४ ॥

न तदस्तीन्द्रियार्थेषु, यत्क्षेमंकरमात्मनः ।
तथापि रमते बाल-स्तत्रैवाज्ञानभावनात् ॥ ५५ ॥

शब्दार्थः--इंद्रियार्थने विषे तेवुं कांइ नथी के, जे आत्मा-

नुं कुशल करनार थाय. तो पण अज्ञानी बहिरात्मा ते इंद्रि-
योना अर्थने विषे मिथ्यात्वना संस्कारथी रमे छे. ॥ ५५ ॥

चिरं प्रसुप्तास्तमसि, मूढात्मानः कुयोनिषु ॥
अनात्मीयात्मभूतेषु, ममाहमिति जाग्रति ॥ ५६ ॥

शब्दार्थः--अनादि मिथ्यात्व संस्कार होवाने लीधे चोरा-
शी लाख कुयोनिमां दीर्घकालथी सूतेला बहिरात्मा परमार्थथी
पोताना संबंधी नहि एवा पुत्र स्त्री विगेरेने विषे ' हुं अने म्हा-
रुं ' एम कहेता छता जागे छे. ॥ ५६ ॥

पश्येन्निरंतरं देहमात्मनोऽनात्मचेतसा ॥
अपरात्मधियाऽन्येषामात्मतत्वे व्यवस्थितः ॥ ५७ ॥

शब्दार्थः--आत्मतत्वने विषे रहेलो अंतरात्मा पोतानां शरीरने
अनात्मबुद्धिथी (आ आत्मा नथी एवा विचारथी) निरंतर जूए
छे तेमज बीजाओने आ परमात्मा नथी एवी बुद्धिथी जूए छे.

अज्ञापितं न जानंति, यथा मां ज्ञापितं तथा ॥
मूढात्मानस्ततस्तेषां, वृथा मे ज्ञापनाश्रमः ॥ ५८ ॥

शब्दार्थः--मूढात्मा जेम आत्मस्वरूप न समजाव्या छता
नथी जाणतो तेम समजाव्या छता पण नथी जाणता. तेथी
ते मूढात्माने म्हारो समजाववानो श्रम फोगट छे. ॥ ५८ ॥

यद्बोधयितुमिच्छामि, तन्नाहं यदहं पुनः ॥
ग्राह्यं तदपि नान्यस्य, तत्किमन्यस्य बोधये ॥ ५९ ॥

शब्दार्थः--जे [illegible] आत्मस्वरूपने
[illegible] हुं बीजाने [illegible]
[illegible] नथी. अने [illegible] हुं निर्विकल्प हुं ते

बीजाने ग्राह्यमां आवुं तेम नथी. तो पछी हुं बीजाने शा माटे आत्मतत्वनो बोध करुं ? ॥ ५९ ॥

वहिस्तुष्यति मूढात्मा, पिहितज्योतिरंतरे ॥
तुष्यत्यन्तः प्रबुद्धात्मा, वहिर्व्यावृत्तकौतुकः ॥ ६० ॥

शब्दार्थः—अंदरना तत्त्व विषयने विषे मोहथी ढंकाइ गयेला ज्ञानवालो वहिरात्मा शरीरादि वाह्य अर्थने विषे प्रसन्न थाय छे अने शरीरादिकने विषे प्रीति रहित एवो अंतरात्मा पोतानां स्वरूपने विषे प्रसन्न थाय छे. ॥ ६० ॥

न जानति शरीराणि, सुखदुःखान्यवुध्यः ॥
निग्रहानुग्रहधियं, तथाप्यत्रैव कुर्वते ॥ ६१ ॥

शब्दार्थः-शरीरो सुख दुःखने जाणतां नथी, तोपण वहिरात्मा एज शरीरादिकने विषे उपवासादि करवाथी निग्रह करवानी अने कुंकुम करां विगेरेथी शणगारवावमे अनुग्रह करवानी बुद्धि करेछे.

स्ववुद्ध्या यावद्गृह्णीयात, कायवाक्चेतसां त्रयम् ॥
संसारस्तावदेतेषां, भेदाभ्यासे तु निवृत्तिः ॥ ६२ ॥

शब्दार्थः--ज्यां सुधी शरीर, वाणी अने चित्त ए त्रणने आत्मवुद्धिथी ग्रहण करे त्यांसुधी संसार थाय छे अने ते त्रणनो भेद अभ्यास थयो एटले मुक्ति थायछे

घने वस्त्रे यथात्मानं, न घनं मन्यते तथा ॥
घने स्वदेहेप्यात्मानं न घनं मन्यते बुधः ॥ ६३ ॥

शब्दार्थः-ज्ञानी पुरुष जेम मजवुत वस्त्र पहेरवाथी पोताने मजवुत मानतो नथी तेम शरीर पण मजवुत होय तोपण आत्माने मजवुत मानतो नथी. ॥ ६३ ॥

ने विषे पण धारण करे छे. ॥ ९१ ॥

दृग्भेदो यथा दृष्टिं, पंगोरंधे न योजयेत् ॥
तथा न योजयेद्देहे, दृष्टात्मा दृष्टिमात्मनः ॥ ९२ ॥

शब्दार्थ–पांगलानो अने आंधलानो भेद जाणनारो पुरुष जेम पांगलानी दृष्टि आंधलाने विषे न धारण करे तेम देह अने आत्मानो भेद जाणनारो अंतरात्मा पुरुष आत्मानी दृष्टि देहने विषे न धारण करे. ॥ ९२ ॥

सुप्तोन्मत्ताद्यवस्थैव, विभ्रमोऽनात्मदर्शिनाम् ॥
विभ्रमोऽक्षीणदोषस्य, सर्वावस्थात्मदर्शिनः ॥ ९३ ॥

शब्दार्थः–बहिरात्माओने सुप्तावस्थानी पेठे अने उन्मत्तादि अवस्थानी पेठे विभ्रम छे. तथा बालकुमारादि लक्षणवाली सर्व अवस्थाने आत्मा पण जोनारा बहिरात्माओने विभ्रमज होय छे.

विदिताशेषशास्त्रोऽपि, न जाग्रदपि मुच्यते ॥
देहात्मदृष्टिर्ज्ञातात्मा, सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ॥ ९४ ॥

शब्दार्थः–बहिरात्मा सर्व शास्त्रने जाणवाने लीधे जागतो छतो पण छूटातो नथी. अने आत्माने जाणनारो अंतरात्मा सुतो अने उन्मत्त छतो पण छूटाय छे. ॥ ९४ ॥

यत्रैवाहितधीः पुंसः श्रद्धा तत्रैव जायते ॥
यत्रैव जायते श्रद्धा, चित्तं तत्रैव लीयते ॥ ९५ ॥

शब्दार्थः–जे विषयमां बुद्धि आश्रय करे, पुरुषने तेज विषयमां श्रद्धा थाय छे अने जे विषयमां श्रद्धा थाय छे तेज विषयमां [illegible] थाय छे. ॥ ९५ ॥

यत्रानाहितधीः पुंसः, श्रद्धा तस्मान्निवर्तते ॥
यस्मान्निवर्तते श्रद्धा, कुतश्चित्तस्य तल्लयः ॥ ९६ ॥

[illegible]

शब्दार्थः--जे विषयमां बुद्धि आश्रय न करे, पुरुषने ते विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे अने जे विषयथी श्रद्धा निवृत्ति पामे ते विषयमां चित्तनी आशक्ति क्यांथी होय. ॥ ९६ ॥

भिन्नात्मानमुपास्यात्मा, परो भवति तादृशः ॥
वर्तिर्दीपं यथोपास्य, भिन्ना भवति तादृशी ॥ ९७ ॥

शब्दार्थः--जेम दीवाथी जूदो एवी वाट दीवाने पामीने दीवारूप बनी जाय छे तेम आत्माथी जूदो एवो आराधक पुरुष अर्हत् सिद्धरूप आत्मानी उपासना करीने तेओ परमात्मरूप बनी जाय छे. ॥ ९७ ॥

उपास्यात्मानमेवात्मा, जायते परमोऽथवा ॥
मथित्वात्मानमात्मैव, जायतेऽग्निर्यथा तरुः ॥ ९८ ॥

शब्दार्थः--जेम वृक्ष पोतानां शरीरने घर्षण करीने पोते अग्निरूप थाय छे तेम आत्मा (उपासक) चिदानंदमय पोताना आत्मस्वरूपनी उपासना करीने परमात्मरूप थाय छे. ९८

इतीदं भावयेन्नित्य-मवाचागोचरं पदम् ॥
स्वत एव तदाप्नोति, यतो, नावर्तते पुनः ॥ ९९ ॥

शब्दार्थः--आ कह्या प्रमाणे जे भिन्न अने अभिन्न एवा आत्मपदनी नित्य भावना करे छे ते वाणीने अगोचर एवा मोक्ष स्थानने पोतानी मेळेज पामे छे अने ते प्राप्त थयेला पदथी फरी पाछो आवतो नथी. ॥ ९९ ॥

अयत्नसाध्यं निर्वाणं, चित्तत्वं भूतजं यदि ॥
अन्यथा योगतस्तस्मान्नदुःखं योगिनां क्वचित् ॥१००॥

शब्दार्थः--जो चेतना लक्षण तत्त्व पृथ्वी आदि पांच महाभूतथी उत्पन्न थयेलुं जाणीये तो पछी मोक्ष, यत्न करया विना

पण साध्य छे अने प्रारब्ध योगनी अपेक्षाये जो ते तत्त्व पृथ्वी आदि पांच महाभूतथी उत्पन्न थयेलुं न जाणीये तो पछी योग थी मोक्ष प्राप्ति छे, माटे दुर्धर अनुष्ठान अथवा छेदन भेदनादि कोइ पण अवस्थामां योगीओने दुःख थतुं नथी ॥ १०० ॥

स्वप्ने दृष्टे विनष्टेऽपि, न नाशोऽस्ति यथात्मनः ॥
तथा जागरदृष्टेऽपि, विपर्यासाविशेषतः ॥ १०१ ॥

शब्दार्थ-जेम स्वप्नावस्थामां नाश पामेला शरीरादिकने जोइने पण आत्मानो नाश नथी देखातो तेम विपर्यासना अवि शेष पणाथी जाग्रत अवस्थामां पण नाश पामेला शरीरादिक ने जोइने पण आत्मानो नाश नथी देखातो. ॥ १०१ ॥

अदुःखभावितं ज्ञानं, क्षीयते दुःखसंनिधौ ॥
तस्माद्यथाबलं दुःखै-रात्मानं भावयेन्मुनिः ॥ १०२ ॥

शब्दार्थः—[illegible] कष्ट विना एकाग्रपणाथी एकठुं [illegible] नाश पामी जायछे, माटे योगी [illegible] अनुसार कायक्लेशादि कष्टोवडे आत्माने [illegible] ॥ १०२ ॥

प्रयत्नादात्मनो वायु-रिच्छाद्वेषप्रवर्तितात् ॥
वायोः शरीरयन्त्राणि, वर्तन्ते स्वेषु कर्मसु ॥ १०३ ॥

[illegible] अथवा प्रयत्नने लीधे [illegible] थाय छे अने ते वायु [illegible] लीधे [illegible] पोतपोताने विषे वर्तीं रह्यांछे.

[illegible] सुखं जडः ॥
[illegible] ॥ १०४ ॥

[illegible]

शब्दार्थः--जम एवो बहिरात्मा इंद्रियो सहित ते शरीररूप यंत्रोने आत्माने विषे आरोपण करी " हुं गौरहुं, हुं सारां नेत्र वाळो हुं. एम मानीने न सुख छतां सुख माने छे अने अंतरात्मा ते आरोपने त्यजी दइ मोक्षपदने पामे छे. ॥ १०४ ॥

मुक्त्वा परत्र परबुद्धिमहंधियं च,
संसारदुःखजननीं जननाद्विमुक्तः ॥
ज्योतिर्मयं सुखमुपैति परात्मनिष्ट--
स्तन्मार्गमेतदधिगम्य समाधितंत्रम् ॥१०५॥

शब्दार्थः--संसारथी मुक्त अने परमात्म स्वरूपनो जाण एवो पुरुष परमास्वरूपना जाणपणाना एकात्मताने प्रतिपादन करनारा मोक्षमार्गना उपायरूप आ शास्त्रने पामीने शरीरादिक पदार्थमां परमात्म बुद्धिने अने संसारना दुःखने उत्पन्न करनारी अहंबुद्धिने त्यजी दइ ज्ञानमय एवां सुखने पामे छे. १०५

॥ इति समाधि शतकं संपूर्णम् ॥

॥ अथ सज्जनचित्तवल्लभ ॥

नत्वा वीरजिनं जगत्रयगुरुं मुक्ति श्रियो वल्लभ,
पुष्पेषुक्षयनीतबाणनिवहं संसार दुःखापहम् ॥
वक्ष्ये भव्यजन प्रबोधजननं ग्रंथं समासादहं,
नाम्ना सज्जनचित्तवल्लभमिमं शृण्वतु संतो जनाः १

शब्दार्थः--त्रण जगतना गुरु, मुक्तिरूप लक्ष्मीना पति, कामना बाण समूहने क्षय करनारा अने संसारनां दुःखने नाश करनारा श्री वीर प्रभुने नमस्कार करीने भव्य माणसोने ज्ञान प्रगट करनारा आ सज्जनचित्तवल्लभ नामना ग्रंथने संक्षेपथी कहुं हुं, तेने संत पुरुषो सांभळो ॥ १ ॥

रात्रिश्चंद्रमसा विनाब्जनिवहैर्नो भाति पद्माकरः,
यद्वत्पंडितलोकवर्जितसभा दंतीव दंतं विना ॥
पुष्पं गंधविवर्जितं मृतपतिः स्त्री चेह तद्वन्मुनिः,
चारित्रेण विना न भाति सततं यद्यप्यसौ शास्त्रवान् २

शब्दार्थः—जेम रात्री चंद्र विना, तलाव कमलोना समूह विना, सभा पंडितलोक विना, हाथी दांत विना, पुष्प गंध विना अने स्त्री पति विना नथी शोभती तेम जोके शास्त्रनो जाण होय पण मुनि चारित्र विना शोभतो नथी ॥ २ ॥

किं वस्त्रत्यजनेन भो मुनिरसावेतावता जायते,
क्ष्वेडेन च्युतपन्नगो गतविषः किं जातवान् भूतले ॥
मूलं किं तपसः क्षमेन्द्रियजयः सत्यं सदाचारता-
रागादींश्च बिभर्ति चेन्न स यतिर्लिंगी भवेत्केवलम् ३

शब्दार्थः—अरे ! वस्त्रने तजवाथी शुं ? आ पुरुष ए वस्त्रने [illegible] शुं मुनि थाय ? अर्थात् न थाय. विष खरी पडेलो [illegible] शुं पृथ्वीने विषे थाय खरो ? [illegible] इंद्रियजय, सत्य अने स- [illegible] रागादिकने धारण करेछे तो ते [illegible] ॥ ३ ॥

[illegible] धनाकांक्षा भवेच्चेन्मनसि,
[illegible] मन्यसे ॥
[illegible] त्यागजं.
[illegible] संपदं ॥ ४ ॥

[illegible] दीक्षा लेवाथी
[illegible]

शब्दार्थ--तुं जे जे वस्तुनी इच्छा करे छे ते ते वस्तु तें शरीरने आपीने तेने पुष्ट बनावी दीधुं, तोपण हे जडबुद्धि! ते शरीर त्हारी साथे आववानुं नथी. वली शुं मित्रादि आववाना छे ? अर्थात् तेओ पण आववाना नथी. परंतु पुण्य अने पाप ए ए बन्ने त्हारी पाछल आववाना छे, माटे तुं शरीरादिकने विषे फोगट एवो महामोह न कर. ॥ ए ॥

अष्टाविंशतिभेदमात्मनि पुरा संरोप्य साधो वृत्तं,
साक्षीकृत्य जिनान् गुरूनपि कियत्कालं त्वया पालितम् ॥
भंक्तुं वांछसि शीतवातविहतो भूत्वाधुना तद्व्रतं,
दारिद्र्योपहतः स्ववांतमसनं भुंक्ते क्षुधार्तोऽपि किम् १०

शब्दार्थ–हे साधु ! तें श्री जिनेश्वरने तथा गुरुने साक्षी करी अठाविश भेदवाला साधु व्रतने अंगीकार करीने केटलोक काल पाल्युं छे. वली हवणां ते तुं विषयरूप वायुथी हणायो थतो थइने तेने भांगवानी इच्छा करे छे. परंतु दारिद्र्यथी हणायेलो एवो पण भुख्यो माणस शुं पोताना वमन करेला पदार्थने खाय खरो ? अर्थात् न खाय. ॥ १० ॥

सौख्यं वांछसि किं त्वया गतभवे दानं तपो वा कृतं,
नो चेत्त्वं किमिहैवमेव लभसे लब्धं तदत्रागतम् ॥
धान्यं किं लभते विनापि वपनं लोके कुटुंबीजनो-
देहे कीटकभक्षितेक्षुसदृशे मोहं वृथा मा कृथाः ॥११॥

शब्दार्थः–हे साधु ! तुं देह सुखनी इच्छा करे छे ? तो शुं तें पूर्वभवे दान अथवा तप कर्युं छे ? जो तें दान अथवा तप नथी कर्युं तो तुं आ भवमां शुं पामवानो छे ? अने सुख प्राप्त करवानी इच्छाथी जे शुभाशुभ कर्म कर्युं छे ते आ भवमां तेनी मेळव

भिक्षो भाटकसद्मसन्निभतनोः पुष्टिं वृथा मा कृथाः,
पूर्णे किं दिवसावधौ क्षणमपि स्थातुं यमो दास्यति १४

शब्दार्थ–जो त्हारे खराब भोजनमां पण वेचाथी अन्न लाववुं पमतुं होय तो रोष करवो योग्य छे, परंतु मुनिजनोए भिक्षामां जे अन्न मेलवाय तेज आदरथी भोजन कराय छे, माटे हे भिक्षु ! भामाना घर सरखा आ शरीरने तुं वृथा पुष्टि न कर. कारणके, ते शरीरनी अवधि पूर्ण थइ रहेशे त्यारे तने यम क्षण मात्र पण तेमां रहेवा देशे नहि. ॥ १४ ॥

लब्धान्नं यदि धर्मदान विषये दातुं न यैः शक्यते,
दारिद्रोपहतास्तथापि विषयाशक्तिं न मुंचंति ये ॥
धृत्वा ये चरणं जिनेंद्रगदितं तस्मिन् सदा नादरा–
स्तेषां जन्म निरर्थकं गतमजाकंठे स्तनाकारवत् १५

शब्दार्थः–जो के जे गृहस्थो पोताने मलेलुं अन्न धर्मदान करवामां आपी शकाता नथी, जेओ दारिद्रथी हणाया छता पण विशयाशक्तिने मूकता नथी अने जेओ जिनराजे कहेला चारित्रने धारण करी तेने विषे आदर करता नथी. ते सर्वेनो जन्म बकरी ना कंठे रहेला स्तननी पेठे निष्फल गयो छे. ॥ १५॥

दुर्गंधं नवभिर्वपुः प्रवहति द्वारैरिमं संततं,
संदृष्टापि हि यस्य चेतसि पुनर्निर्वेदता नास्ति चेत् ॥
तस्माद्यद्भुवि वस्तु कीदृशमहो तत्कारणं कथ्यते,
श्रीखंडादिभिरंगसंस्कृतिरियं व्याख्याति दुर्गंधतां १६

शब्दार्थ–आ शरीर नवद्वारोथी हमेशां दुर्गंधनेज वहन करे छे; ते शरीरने जोइने जे पुरुषना चित्तमां जो वैराग्य नथी

थयो तोपणे आश्चर्य छे के, तेने पृथ्वी उपर बीजी कइ वस्तु वैराग्यनुं कारण कहेवाय? आ शरीर प्रत्यक्ष श्रीखंड चंदन विगेरेथी करेली अंगनी संस्कृती पण दुर्गंधनेज प्रगट करे छे. ॥१६॥

शोचंति न मृतं कदापि वनिता यद्यस्ति गेहे धनं,
तच्चेन्नास्ति रुदंति जीवनधिया स्मृत्वा पुनः प्रत्यहम् ॥
कृत्वा तद्दहनक्रियां निजनिजव्यापारचिंताकुला-
स्तन्नामापि च विस्मरंति कतिभिःसंवत्सरैर्योषितः १७

भावार्थः—स्त्री जो घरने विषे धन होय तो मृत्यु पामेला पतिनो शोक करती नथी अने जो धन नथी होतुं तो आजीविकानी बुद्धिथी तेने हमेशा वारंवार संभारीने रुदन करे छे. पछी तेनी उर्ध्वदेहिक क्रीया करीने पछो पोतपोताना कामनां आकुल व्याकुल थइ गती केटलाक वर्ष तेनुं नाम पण विसरी जाय छे. ॥ १७ ॥

[illegible] सदा,
[illegible] परिभ्राम्यसि ॥
[illegible] न ज्ञातेन [illegible];
[illegible] १८

[illegible]

देहे निर्ममता गुरौ विनयता नित्यं श्रुताभ्यासता,
चारित्रोज्ज्वलता महोपशमता संसारनिर्वेदता ॥
अंतर्बाह्यपरिग्रहत्यजनता धर्मज्ञता साधुता,
साधो साधुजनस्य लक्षणमिदं संसारविच्छेदनम् ॥ १९॥

शब्दार्थः-हे साधु! शरीरने विषे निर्ममपणुं, गुरुने विषे विनयपणुं, निरंतर शास्त्रने विषे अभ्यासपणुं, चारित्रनुं उज्ज्वल पणुं, म्होटुं उपशमपणुं, संसारमां वैराग्यपणुं, अंतरना अने बाह्यना परिग्रहने त्यजवापणुं, धर्मज्ञपणुं अने साधुपणुं. आ उपर कहेलुं साधुजननुं लक्षण संसारनो नाश करनारुं छे. ॥ १९ ॥

लब्ध्वा मानुषजातिमुत्तमकुलं रूपं च नीरोगतां,
बुद्धिं धीधनसेवनं सुचरणं श्रीमज्जिनेंद्रोदितम् ॥
लोभार्थं वसुपूर्णहेतुनिरलं स्तोकाय सौख्याय भो,
देहिन् देहसुपोतकं गुणभृतं भंक्तुं किमिच्छास्ति ते २०

शब्दार्थः-हे देहधारी ! मनुष्यजातिने, उत्तमकुलने, रूप ने, नीरोगीपणाने, बुद्धिने बुद्धिवंतनी सेवाने अने श्री जिनराजे कहेला चारित्रने त्हारे पामीने लोभने अर्थे धनने एकवा करवाना कारणथी सर्युं. शुं थोका सुखने माटे गुणथी पूर्ण एवा आ देहरूप उत्तम नावने भांगी नांखवानी त्हारी इच्छा छे ? ॥२०॥

वेतालाकृतिमर्धदग्धमृतकं दृष्ट्वा भयं यते,
यासां नास्ति भयं त्वया सममहो जल्पंति प्रत्युत्तरम् ॥
राक्षस्यो भुवि नो भवंति वनिता मामागता भक्षितुं,
मत्वैव प्रपलायतां मृतिभयात् त्वं तत्र मा स्याःक्षणम् ॥

शब्दार्थः-हे यति ! वेतालना सरखी आकृतीवाला .

आयुष्यं तव निद्रयार्द्धमपरं चायुस्त्रिभेदादहो,
बालत्वे जरया कियद्व्यसनतो यातीति देहिन् वृथा ॥
निश्चित्यात्मनि मोहपाशमधुना संछिद्य बोधासिना,
मुक्तिश्रीवनितावशीकरणसच्चारित्रमाराधय ॥ २४ ॥

शब्दार्थः–हे दहिन्! ह्हारुं अर्धुं आयुष्य निद्रामां चाल्युं जाय छे अने बाकीनुं अर्धुं त्रण भेदथी चाल्युं जाय छे ते त्रण भेदमां कटलुंक बाल्यावस्थामां, केटलुंक वृद्धावस्थामां अने केटलुंक विषयादिव्यसनमां फोगट जाय छे. आ प्रमाणे तुं आत्माने विषे निश्चय करी हवणां बोधरूप खड्गथी मोह पासने कापी नांखी मुक्ति श्री रमणीने वशी करण एवा उत्तम चारित्रने आराध.

वृत्तैर्विंशतिभिश्चतुर्भिरधिकैः सल्लक्षणेनान्वितः,
ग्रंथं सज्जनचित्तवल्लभमिमं श्रीमल्लिषेणोदितम् ॥
श्रुत्वात्मेंद्रियकुंजरान्समटतो रुंधंतु ते दुर्जयान्,
विद्वांसो विषयाटवीषु सततं संसारविच्छित्तये ॥ २५ ॥

शब्दार्थः–श्री मल्लिषेण गुरुए उत्तम लक्षणवाला चोवीश काव्योवडे कहेला आ सज्जनचित्तवल्लभ नामना ग्रंथने सांभळीने ते पूर्वे कहेला संत पुरुषो संसारनो छेद करवा माटे विषयरूप अरण्यमां भटकता एवा दुर्जय इंद्रियरूप गजोने वश करो. २५

॥ इति सज्जनचित्तवल्लभ संपूर्ण ॥

आवएणं विहारेण, मद्दवेण ज्जवेणयं ॥ १२ ॥
लाघवेणं च खंतीए, गुत्ती मुत्ती अणुत्तरे ॥
संजमेण तवेणंच, संवरेणं मणुत्तरे ॥ १३ ॥
अणेग गुण सयाइन्ने, धम्म सुक्काण ज्ञायए ॥
घाइक्कएण संजाए, अणंतवर केवली ॥ १४ ॥
वीयराएय निग्गंथे, सवन्नु सवदंसणे ॥
देविंद दाणविं देहिं; निव्वत्तिय महामहे ॥ १५
सव्वं भासाणुगाएय, भासाए सव्व संसए ॥
जुगवं सव्वजीवाणं, छिंदित्त जिन्नगोयरे ॥ १६
हिए सुहेय निस्सेय, कारए सव्व पाणिणं ॥
महव्वयाणि पंचेव, पन्नवित्ता सभावणे ॥ १७ ।
संसारसायरं वुड्ड, जंतुसंताण तारए ॥
जाणुव्व देसियं तित्र, संपत्ते पंचमं गई ॥ १८ ।
से सिवे अयले निच्चे, अरूवे अयरामरे ॥
कम्मप्पपंचनम्मुक्के, जएवीरे जएजिणे ॥ १ए ॥
से जिणे वद्धमाणेय महावीरे महायसे ॥
असखंडुक्खखिन्नाणं, अम्हाणं देउ निव्वुइ ॥ २

इय परम पमोया संथुर्ज वीरनाहो,
परमपसमदाणा देउ तुम्हचणं मे ॥
असमसुहडुहेसु सग्ग सिद्धी जवेसु,
कणयकयवरेसु सतु मित्तेसुवाणि ॥ २१ ॥

॥ इति श्रीवीरजिन स्तवन ॥

कुणसु पसायं गुरुयं, वच्छलीसंसयाण जइ होइ ॥
जम्हा महाणुभावा, सरणागय वच्छला हुंति ॥ १२ ॥

कम्मवसेणय अहयं, भारहवासंमि जइवि चिट्ठामि
तहवि तुमं महियए, रयणायर चंदणाएण ॥ १३ ॥

तं पहु तं मय गुरू, तं देवो बंधवो तुमं चेव ॥
गुरु संसारगयाणं, जीवाणं तुज्झ तं सरणं ॥ १४ ॥

संसारजलहिमज्झे, निवुड्डमाणेहिं भव्व सत्तेहिं ॥
पइदिवसं समरिज्जइ, सीमंधर सामि पयकमलं ॥ १

जइ इच्छइ परमपयं, निव्वंभा तहय जम्ममरणाणं ॥
ता समरह जिणनाहं, विदेहवासंमि विहरंतं ॥ १६ ॥

जो निच्चं भव्वाणं, विदेहवासंमि सामि विहरंतो ॥
स कम्मदेसणाए, मिच्छत्त पणासणं कुणइ ॥ १७ ॥

पच्चूसे मज्झे संझा समयंति सव्वकालंमि ॥
सीमंधर तित्थयरं, वंदेहं परम भत्तीए ॥ १८ ॥

पंच धणुस्सय माणो, चउरासी पुव्वलख वरिसाऊ ॥
सो सीमंधरनाहो, अणंतनाणी सया जयउ ॥ १९ ॥

मुणिसुव्वय नमि तित्थयर, अंतरे रज्जलच्छि विच्छड्डं ॥
दिक्खिय पव्वज्जदिवसं, सीमंधर सामियं वंदे ॥ २० ॥

इय सीमंधरनाहो, थुणिओ मए भत्तिरायकलियाणं ॥
सासय सुहफल जणओ, जयनाहो होउ भवियाणं ॥ २

॥ इति श्रीमंधरजिन स्तवन ॥

बहुआं बहुयां दिवसडां, जइ मइं सुहगुरु दिठ ॥
लोयणवे विकसी रयां, हीअडइं अमिअ पइठ ॥ १३ ॥
अहो ते निज्जिश्र कोहो, अहो माणो पराजिउं ॥
अहो ते निरक्किया माया, अहो लोहो वसीकीउं ॥ १४ ॥
'अहो ते अज्जवं साहु, अहो ते साहु मद्दवं ॥
अहो ते उत्तमा खंती. अहो ते मुत्ति उत्तमा ॥ १५ ॥
इहंसि उत्तमो भंते, पच्छाहोहिसि उत्तमो ॥
लोगुत्तमुत्तमं ठाणं, सिद्धिं गच्छसि नीरउं ॥ १६ ॥
आयरिय नमुक्कारो, जीवं मोएइ चवसहस्साउं ॥
भावेण कीरमाणो, होइ पुणो बोहिलाभाए ॥ १७ ॥
आयरिअनमुक्कारो, सव्वपावप्पणासणो ॥
मंगलाणं च सव्वेसिं, तइयं हवइ मंगलं ॥ १८ ॥
॥ इति श्री गुरु प्रदक्षणा समास ॥

॥ अथ जीवानुशास्ति कुलक ॥

रेजीव किं न बुज्झसि, चउगइसंसारसायरे घोरे ॥
भमीउं अणंतकाले, अरहट्ट घडिव्व जलमज्झे ॥ १ ॥
रेजीव चिंतसि तुमं, निमित्तमित्तं परो हवइ तुज्झ ॥
असुहपरिणामजणियं, फलमेयं पुव्वकम्माणं ॥ २ ॥
रेजीव कम्मभरिअं उवएसं कुणसि मूढ विवरिअं ॥
कुगयगमणमणाणं, एसच्चिय हियइ परिणामो ॥ ३ ॥
रेजीव तुमं सील, सवणा दाऊण सुणसु महवयणं ॥
जं सुक्खं नइ पाविसि, ता धम्मविवज्जिउं नूणं ॥४॥
रेजीव माविसायं, जाहितुमं पिच्छिऊण पररिद्धी ॥
धम्मरहियाण कुत्तो, संपज्जइ विवहसंपत्ती ॥ ५ ॥